

ISSN : 2456-8856

पंजीयन संख्या RNI No.: MPHIN/2002/9510

डाक पंजीकृत क्रमांक. मालवा डिवीजन/204/2021-2023 उज्जैन (म.प्र.)

UGC Care Listed and Peer Reviewed Referred Bilingual Monthly International Research Journal
प्रेषण दिनांक 30 पृष्ठ संख्या 28

आश्वस्त

वर्ष 24, अंक 218

दिसम्बर 2021



शत-शत नमन

संपादक - डॉ. तारा परमार



भारती दलित साहित्य अकादमी मध्यप्रदेश, उज्जैन की अन्तर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका

अनुक्रमणिकासंस्थापक सम्पादक
डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

संरक्षक

सेवाराम खाण्डेगर्11/3, अलखनन्दा नगर, बिड़ला हॉस्पिटल के पीछे,
उज्जैन मो.: 98269-37400

परामर्श

आयु. सूरज डामोर IASपूर्व सचिव-लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण वि.
म.प्र.शासन, भोपाल मो. 094253-16830

सम्पादक

डॉ. तारा परमार9-बी, इन्द्रपुरी, सेठी नगर, उज्जैन-456010
मो. 94248-92775

सम्पादक मण्डल :

डॉ. जयप्रकाश कर्दम, दिल्ली**डॉ. खन्नाप्रसाद अमीन, गुजरात****डॉ. जसवंत भाई पण्ड्या, गुजरात****डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा, म.प्र.**

कानूनी सलाहकार

श्री खालीक मन्सूरी एडव्होकेट, उज्जैन

| क्र. विषय | लेखक | पृष्ठ |
|--|--------------------------|-------|
| 1. अपनी बात | डॉ. तारा परमार | 03 |
| 2. Factors Affecting the School Dropout in Rajasthan: A Study based on NSSO Data | Lalita Yadav | 04 |
| 3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2022: एक समीक्षा | आयु. बरनाली राय | 12 |
| 4. सामाजिक यथार्थ का दर्पण : डेथ कान्ट स्टॉप मी | डॉ. गायत्री देवी लालवानी | 16 |
| 5. दलित स्त्री का संघर्ष और साहित्य | डॉ. ललिता कौशल | 21 |
| 6. आतंकवाद से भी खतरनाक जातिवाद है, जातिवाद को जड़ से समाप्त किया जाना चाहिए | डॉ. बी.एल. परमार | 25 |

UGC Care Listed Journal

खाते का नाम - आश्वस्त (Ashwast)

खाते का नं.- 63040357829

बैंक - भारतीय स्टेट बैंक,

शाखा- फ्रीगंज, उज्जैन (Freeganj, Ujjain)

IFS Code - SBIN0030108

Web : www.aashwastujjain.comE-mail : aashwastbdsamp@gmail.com

| | | |
|-----------------------|---|----------------|
| एक प्रति का मूल्य | : | रुपये 15/- |
| वार्षिक सदस्यता शुल्क | : | रुपये 150/- |
| आजीवन सदस्यता शुल्क | : | रुपये 1,500/- |
| संरक्षक सदस्यता शुल्क | : | रुपये 10,000/- |

विशेष : सम्पादन, प्रकाशन एवं प्रबंध अवैतनिक तथा पत्रिका में प्रकाशित विचारों से सम्पादक-मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। विवाद की स्थिति में न्यायालय क्षेत्र उज्जैन रहेगा।

अपनी बात

सामाजिक न्याय का आधार स्तंभ मानवाधिकार तथा समानता है। निःसंदेह सामाजिक न्याय उस समाज की स्थापना करने की अवधारणा है जो समानता तथा बंधुता के मूल्यों पर अवलम्बित होकर मानव अधिकारों के मूल्यों को समझे तथा प्रत्येक मनुष्य की प्रतिष्ठा को भी पहचानें। सामाजिक न्याय से आशय सामाजिक और आर्थिक गतिविधियों में समस्त मानव को समान अवसर की प्राप्ति और असमानता की समाप्ति से है।

डॉ. अम्बेडकर का मानना है कि मानवीय अधिकारों की सुरक्षा कानून से तो होती है, उससे पहले समाज की सामाजिक एवं नैतिक भावना द्वारा हुआ करती है, क्योंकि जब सामाजिक भावना कानून द्वारा प्रदान अधिकारों को मान्यता देने के लिये तैयार होती है तो अधिकार सुरक्षित हो जाते हैं, किन्तु देखने में यह आता है कि अनेक बार समाज मूल अधिकारों का विरोधी हो जाता है, तब न्यायपालिका को स्वतः संज्ञान लेते हुए व्यक्ति के अधिकार की रक्षा करनी पड़ती है या व्यक्ति के अधिकारों का हनन होने से रोकना पड़ता है।

डॉ. अम्बेडकर ने भारत के दलित-शोषित-वंचित लोगों की समस्याओं को वैश्विक स्तर पर मानवीय समस्याओं के साथ जोड़कर उन्हें विस्तृत दृष्टिकोण प्रदान किया और अपनी इस मानवतावादी सोच के आधार पर उनके समाधान हेतु सक्रिय प्रयास भी किये। देश में आज जो राष्ट्रीय मानवाधिकार गठित है, वह डॉ. अम्बेडकर की ही तपस्या का परिणाम कहा जा सकता है। जहाँ तक मानवीय संवेदनाओं का प्रश्न है, इस चिंतन पर डॉ. अम्बेडकर ने विशेष ध्यान दिया जिसमें सभी मानव जाति आपस में एक-दूसरे के भाई-भाई हैं। उसमें कहीं किसी प्रकार सजग-सचेत होकर अपने कार्य में संलग्न होना चाहिए यह इस सोच की सबसे महत्वपूर्ण नैतिक शिक्षा है। उन्होंने जो कुछ भी चिंतन किया और कहा-करके दिखा दिया। सम्प्रति उनका जीवन-दर्शन सामाजिक परिप्रेक्ष्य में भी प्रभूत रूप से प्रासंगिक है। उनके मानवतावादी आदर्शों का अनुसरण विकासोन्मुख समाज का संदेश है। वे चाहते थे कि निरर्थक रूढ़िवादी परम्परागत धार्मिक मूल्यों का परित्याग कर नये विचार की नींव डाली जाये।

डॉ. अम्बेडकर ने अपने आर्थिक चिंतन में समाजवादी समाज योजनाबद्ध विकास कृषि उद्योग, औद्योगिक और सीमित राष्ट्रीयकरण पर जोर दिया है लेकिन आनेवाली

संतानों को किसी एक विचारधारा से बांधकर नहीं रखा है। क्योंकि उनका मानना था कि समय, सामाजिक, आर्थिक स्थितियाँ परिवर्तित होती रहती है। किसी भी स्थिति को स्थायी रूप देना व्यक्ति की आजादी का हनन है, आजादी के बाद सरकार की जो नीतियाँ रही उनमें डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा उभरकर सामने आती है। उनके मानवतावादी दर्शन में भारतीय संस्कृति को ही नहीं अपितु विदेशी विचारधारा को भी समान स्थान प्राप्त है।

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर का सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक चिंतन यथार्थ परक और मानवता के लिए रहा है। समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व, मानवीय गरिमा, आत्म सम्मान तथा न्याय उनके दर्शन का मुख्य लक्ष्य रहा है। इनकी प्राप्ति के लिये उन्होंने ऐसी सामाजिक संरचना की संकल्पना दी जिसमें मनुष्य को अपना सर्वांगीण विकास करने का अवसर प्राप्त हो।

इतिहास साक्षी है कि समाज के सभी वर्ग के विकास के बिना राष्ट्र के विकास की संकल्पना बेमानी है इसलिए सभी वर्गों को सशक्त बनाना आवश्यक है। राज्य के आवश्यक तत्वों में एक महत्वपूर्ण तत्व जनसंख्या है, यानी उस देश के नागरिक या मानव और सशक्तिकरण का मतलब एक शख्स के रूप में अपनी जिंदगी पर स्वयं के नियंत्रण से है और सामाजिक सशक्तीकरण से तात्पर्य समाज के सभी तबकों के लिये अपनी जिंदगी पर एक समान नियंत्रण और अहम फैसले लेने के लिए अवसर की उपलब्धता है।

किसी भी देश के आगे बढ़ने के लिये पहली और सबसे जरूरी शर्त है कि समाज के सभी तबकों का एक समान सशक्तीकरण हो। यह तभी प्राप्त हो सकता है, जब एक समान विकास का मौका सुनिश्चित करने के लिए अलग-अलग योजनाओं और नीतियों का एकीकरण हो। सरकार बहुआयामी नीति पर काम कर समाज के इन तबकों को सशक्त करने का प्रयास करे, साथ ही मानवाधिकार के हनन के मामलों में मुख्य रूप से सहिष्णुता की संस्कृति को विकसित करके रोका जा सकता है और यह शिक्षा के प्रसार से ही संभव है। इसके अतिरिक्त विभिन्न कानूनों का परिपालन करवानेवाली संस्थाओं जिनमें पुलिस भी सम्मिलित है, को भी इस विषय में शिक्षित और प्रशिक्षित करने की महती आवश्यकता है।

- डॉ. तारा परमार

Factors Affecting the School Dropout in Rajasthan : A Study based on NSSO Data

- Lalita Yadav

Abstract

Education is the basic requirement for human development. With education, employment opportunities are broadened and income levels are increased. Each welfare state attempts to achieve this goal through universalizing literacy and ensuring the quality of education. As a result, some improvement also observed in Rajasthan in term of literacy rate between 2001 to 2011. The challenge of 'Education for All' is still substantial, especially for some section of society. Despite the government's efforts for education, the phenomenon of school dropouts remains a blot on the progress of education not only in India but also in most the states including with the Rajasthan. Present study is an attempt to understand the differentials and determinant of school dropouts in Rajasthan by analyzing the NSSO 64th Round (2007-08) data on education. We applied cross tabulation and logistic regression techniques to identify the factor which determine the school dropouts among children age 5-29 years. It was found that only 59% of the children in the age group 5 to 29 years are currently attending school. Differential in school dropout are observed not only with socioeconomic and demographic characteristics of household but also with the school infrastructure. Results shows that gender differentials are different in case of Rajasthan as girls are less likely to dropout than boys. Gender and age

of children, Residence, caste, monthly household expenditure and the distance from the school are emerged as strong determinant of school dropout in Rajasthan. Therefore, Government needs to special focus on these areas in its education policy and programme in order to overcome with the dropout problem among the children. Key Words: Education, Rajasthan, School Enrolment, Dropout, NSSO, Logistic Regression

Introduction Education is the basic requirement for human development. With education, employment opportunities are broadened and income levels are increased. The development of an individual and the progress of a nation depend on education. It is also the principal instrument in awakening the child to cultural values and thus is the strongest force in the development and growth of a child in preparing him/her to be a responsible, intelligent, and capable citizen. Education is also equally important to improve the women's status and autonomy. It contributes to an increase in confidence and decision-making power within the household. In India, although the percentage of literacy is rising, what is alarming is that the number of illiterate children in the age group of 6 to 14 years is also increasing [Sharma, et al, 2007]. In 1990 at the World Conference on Education for All, governments agreed to a broad range of education goals including that of attainment of Universal Primary Education (UPE) by

the year 2000. Sadly the millennium year had come and gone, but the UPE goal is still a distant dream, more so in developing countries like India. The millennium development goals as drawn up by the United Nations now directs nations to ensure that all boys and girls complete a full course in primary education by the year 2015. While the government has been making concerted efforts aimed at expanding the reach of education, the phenomenon of school dropouts remains a blot on the progress of education in India. What is cause for particular concern is the enormity of the problem in most states of India and at all stages of school education where unacceptably high dropout rates have been reported [Choudhury, 2006]. The dropouts from primary schools are very large in number and they are the much ignored group of children in India. Over sixty percent of the children in India who start first grade do not complete fifth grade. This record compares unfavorably not only with richer industrial nations but also with countries like Malaysia and Sri Lanka where almost all children complete primary schooling (UNESCO, 1989). The dropouts represent a significant human cost to children and the nation since they will most likely be permanently illiterate [Desai, 1991]. Illiteracy, poverty, inadequate earnings and poor living conditions of parents force them not only to withdraw their wards from schools but also put them in various types of jobs for contribution to the family income [Rao, 2000]. According to the United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization (UNESCO, 2007), India has

the lowest public expenditure on higher education per student in the world. India spends just 3.5 percent of its gross domestic product on education, way below China's 8 percent. The public expenditure on education has actually declined from around 3.23 percent of GDP in 2000-01 to 2.88 percent in recent times. As a proportion of total government expenditure, it has declined from around 11.1 percent in 2000-01 to around 9.98 in recent years. Initiatives by the government to improve education

Operation Blackboard (1987-88) aimed to improve the human and physical resources available in primary schools. • Restructuring and Reorganization of Teacher Education (1987) created resource for the continuous upgrading of teachers' knowledge and competence. • Minimum Levels of learning (1991) laid down levels of achievement at various stages and revised textbooks. • National Programme for Nutritional Support to Primary Education (1995) provided a cooked meal every day for children in Classes 1-5 of all government, government-aided and local body schools • District Primary Education Programme (DPEP) (1993) emphasized decentralized planning and management, improved teaching and learning materials, and school effectiveness. • Movement to Educate All (2000) aimed to achieve universal primary education by 2010 through micro-planning and school-mapping exercises, bridging gender and social gaps. • Sarva Shiksha Abhiyan (SSA), started in 2001, is to provide education to children between 6-14 years by 2010, The programme focuses specially on girls and children with challenged social or

financial backgrounds. Review of literature Despite efforts to incorporate all sections of the population into the Indian education system, through mechanisms such as positive discrimination and non-formal education, large numbers of young people are still without schooling. Although enrolment in primary education has increased, it is estimated that at least 35 million and possibly as many as 60 million, children aged 6-14 years are not in school. Severe gender, regional, and caste disparities also exist. The main problems are the high drop-out rate, low levels of learning and achievement, inadequate school infrastructure, poorly functioning schools, high teacher absenteeism, the large number of teacher vacancies, poor quality of education and inadequate funds. The children 'at risk', such as orphans, child-labourers, street children and victims of riots and natural disasters, do not necessarily have access to schools [Lall, 2005]. The poor quality of schooling is responsible for low retention [Colclough, 1993]. Slum dwelling population is vulnerable due to associated influences such as low socio-economic status, lower parental literacy rates, high of juvenile delinquency, and low status of female children [Pratinidhi et al, 1992]. Levy (1971) using data from 42 less developed countries tried to explore the relationship between social, political, economic and educational variables and the dropout rate from primary schools. It was found that school systems with high rates of repetition also have high dropout rates over the primary cycle. This suggests that

automatic promotion may reduce educational wastage. While increased urbanization and development of communication systems increase school continuation. There is some evidence that the economic returns to education are important determinants of school continuation. Borooah (2003) examined a large Indian database and observed that while only 11 per cent of children lived in villages without a primary school, 30 per cent lived in villages without a middle school. A similar picture is reflected in urban areas. Similar results have also been reported by Shariff (1995) and Sengupta and Guha (2002). The fact that dropout rate of Muslims is higher in India has also been borne out by the analysis carried out by Bhat and Zavier (2005). They argued that communities that took to education earlier had the advantage that was passed on to the next generation. Higher illiteracy or educational backwardness of Muslims is a legacy of the past. Consequently in urban India, following independence, upper caste Hindus were in a better position to take advantage of opportunities for secondary education than Muslims who lagged behind in primary education and literacy. Influence of family and household characteristics in school dropouts Choudhury (2006) argued that as student moves from primary school to a higher stage of school, the chance of dropping out of school increases 2.7 times. The chance of Muslim student discontinuing is 1.9 times than that of Hindus. Further he mentioned that the total number of siblings has been found to be a highly significant

predictor of school drop-out. An increase in family size by one increases the chance of dropping out 1.7 times. His analysis confirms that father's level of education is significantly related to dropout behaviour. For each higher class of father's education, the likelihood of a student dropping out reduces by 16 per cent. However "mother's primary education or middle level schooling did not have significant influence on dropouts". Sengupta and Guha (2002) in their analysis of female dropouts in the state of West Bengal have observed that father's level of education is significantly related to dropout behavior.

Rao (2000) also indicate that poverty is one of the main causes of drop out of girls. According to Upendranath (1995) Indian education has been experiencing with high incidence of dropout at middle level (6th to 8th classes) and this is more for girls than boys. Data shows that in most countries, like India, more girls than boys drop out, resulting in a widening of the gender gap between primary and secondary and between secondary and tertiary enrolment ratios. Need for the study Despite of governmental efforts, huge investment and many innovative programmes, the school dropout remains alarming high in many states. In this context, it is not only the provision of schooling facilities and quality of education, but also other household and social factors play a major role in influencing the discontinuation of education. NSSO 64th round (2007-08) provides an opportunity to examine the school dropout, based on large nationally representative sample survey of

households in Indian context. Objectives

To examine the Factors influencing the school dropouts by their background characteristics.

To determine the main determinant of school dropout. Data Source and Methodology This study is based on the findings of the 64th Round all-India survey on "Participation and Expenditure in Education", conducted during the period July 2007 - June 2008 by the National Sample Survey Organization (NSSO). The NSS 64th Round was designed to collect information on (a) participation of persons aged 5-29 years in the education system of the country (b) private expenditure incurred by households on education and (c) the extent of educational wastage in terms of dropout and discontinuance, and its causes. In this study, the person who got enrolled in the school but currently not attending the school among the age 5-29 years are taken for study. The sample size of such cases is 3501. The person who got enrolled in past and not attending currently has been taken as case of dropout or discontinuations are taken as dependent variables. The study uses selected socio-economic variables and some specific causes for dropout to understand the impact of these variables on dropout ratio. The socioeconomic characteristics are such as Sex, place of residence, age group, caste, religion, sex of household head, educational level of household head, Distance of school like primary, upper primary and secondary from home and monthly household expenditure. In order to see the variation in

dropout ratio Cross-tabulation Method has been used with socio-economic variables. Since dropout is a dichotomous variable, Logistic Regression technique is employed to explore the net influences of various variables on dropout after controlling other relevant predictor variables. Analysis After doing cross tabulation between dropout ration and background characteristics to study the gross effects, the result show a wide variation of level of dropout ratio with changing socio-economic (Table-1) Although among all currently attending school person in Rajasthan, the person are who got enrolled ever but not currently attending is considered the case of dropout. This types of case in Rajasthan is 40.9% (NSSO 64th round,(2007-08).

It is found that female (36.3%) has low level of dropout than male (44.2%). Urban areas (33.8%) have less number of dropouts than rural (43.3%). The gap of rural – urban difference is about 10%, that may be due to urban areas have better educational service and quality of service. It is evident that as the age group of person increases the level of dropout also decreases. The dropout in 5-9 age group is 91%, but for next group (10-14) it decrease very rapidly to 59%. In later ages it is tended to decrease smoothly. This may be due to in early ages; probability of educational wastage is always high. If child get fails, not able to cope up with study and school environment and repetition of classes occurs, the chances of dropout increase very high. Religion plays an important role in

education. Person of Hindus (40.4) has low level of dropout than Muslims (44.4%) and Sikhs (50.5%). Jains have lowest level of dropout. This may be due to Jains are economically advanced. Other side Muslims is socially and economically backward. Their children face problems due to be friend with children of other religion and mostly they are ignored and even refused to give admission in school. Household characteristics like sex and educational level of household head have impact on level of dropout. The houses which are headed by male have less number of dropout ratio than female headed household. Mostly, household are headed by male in Rajasthan due to paternity society.

Generally, Female becomes HH head in case of widow, divorced. In this situation women have to work to earn money to bring up their family and stays out of house in working times. Distance of school from home also one of the important factor which have impact on dropout ratio. If the schools are situated far from home, female child have low probability to get admission in school. Monthly household expenditure plays an important role to effects the dropout ratio. On basis of quintals, the poorest has near about 50% dropout among their group. It decreases with as the economic status increase. The dropout ratio decrease a little middle class. After this, dropout ratio decrease very rapidly. This is due higher number poorer person in Rajasthan. It is because skewed to poorer.

Table -1: Percentage distribution of persons of age 5-29 years enrolled in the past but currently not attending (dropout or discontinuing among ever enrolled) by background characteristics.

| Background Characteristics | | Dropout (%) | No. of estimated sample ¹ |
|---|---------------------|-------------|--------------------------------------|
| RAJASTHAN | | 40.9 | 8176325 |
| Sex | Male | 44.2 | 4769418 |
| | Female | 36.3 | 3406907 |
| Place of Residence | Rural | 43.3 | 6112889 |
| | Urban | 33.8 | 2063435 |
| Age Group | 5-9 | 91.6 | 52733 |
| | 10-14 | 59.7 | 640628 |
| | 15-19 | 46.8 | 2211474 |
| | 20-24 | 38.2 | 3059125 |
| | 25-29 | 32.0 | 2212366 |
| Caste | ST | 52.8 | 837433 |
| | SC | 49.0 | 1614115 |
| | OBC | 39.2 | 3976458 |
| | Others | 31.6 | 1748318 |
| Religion | Hindu | 40.4 | 7240810 |
| | Muslims | 44.4 | 752402 |
| | Sikhs | 50.5 | 145981 |
| | Jains | 16.5 | 30762 |
| | Others | 71.5 | 6369 |
| Sex of Household Head | Male | 46.0 | 829998 |
| | Female | 68.8 | 32930 |
| Educational level of HH Head | No education | 100 | 7889 |
| | Primary | 60.4 | 423055 |
| | Secondary | 40.7 | 332460 |
| | More than secondary | 5.90 | 99525 |
| Distance of primary school from home | Less than 2KM. | 40.7 | 8090440 |
| | More than 2KM. | 56.0 | 85884 |
| Distance of upper primary school from home | Less than 2KM. | 40.0 | 7403337 |
| | More than 2KM. | 47.9 | 772987 |
| Distance of secondary school from home | Less than 2KM. | 38.4 | 4955145 |
| | More than 2KM. | 44.7 | 3221180 |
| Monthly Household Expenditure (Quintal) | 0-20 (Poorest) | 50.6 | 1602433 |
| | 20-40(Poorer) | 47.6 | 1198622 |
| | 40-60(middle) | 46.3 | 1596215 |
| | 60-80(Richer) | 33.4 | 2026861 |
| | 80-100(Richest) | 31.1 | 1752194 |

NoofOriginalSample=3501

¹ Weighted cases

Table 2: Result of Logistic Regression

| Background Characteristics | | B | Sig. | Exp(B) |
|---|---------------|--------|------|----------|
| Sex ¹ | Female | -.318 | .000 | .728*** |
| Types of Residence ² | Urban | -.200 | .031 | .819** |
| Age Group ³ | 10-14 | -1.791 | .005 | .167*** |
| | 15-19 | -2.168 | .000 | .114*** |
| | 20-24 | -2.558 | .000 | .077*** |
| | 25-29 | -2.793 | .000 | .061*** |
| Caste ⁴ | SC | .013 | .929 | 1.013 |
| | OBC | -.227 | .083 | .797* |
| | Others | -.487 | .001 | .614*** |
| Religion ⁵ | Muslims | .449 | .000 | 1.567*** |
| | Sikhs | .367 | .172 | 1.444 |
| | Jains | .555 | .190 | 1.743 |
| | Others | .900 | .334 | 2.460 |
| Distance of primary school from home ⁶ | More than 2Km | .754 | .044 | 2.125* |
| Distance of upper primary school from home ⁶ | More than 2Km | -.145 | .308 | .865 |
| Distance of secondary school from home ⁶ | More than 2Km | .055 | .544 | 1.057 |
| Monthly Household Expenditure (Quintal) ⁷ | 20-40 | .016 | .899 | 1.016 |
| | 40-60 | .018 | .874 | 1.018 |
| | 60-80 | -.322 | .004 | .725*** |
| | 80-100 | -.447 | .000 | .639*** |
| | Constant | 2.533 | .000 | 12.587 |

No of sample = 3501

Dependent variable: Persons of age 5-29 years enrolled in the past but currently not attending (case of dropout) =0, Attending=1. **Significant level:** (***) = Significant with $\alpha < 0.01$, (**) = Significant with $\alpha < 0.05$, (*) = Significant with $\alpha < 0.10$

Reference Categories:

1. Male
2. Rural
3. 5-9 (Age Group)
4. ST (Caste)
5. Hindus
6. Less than 2 KM
7. 0-20 (Quintal, Monthly household expenditure)

Logistic Regression Analysis (Table-2) shows that gender has a significant role to determine the level of dropout. Female are 28% less likely to dropout than males. This may be due to male have to participate in economic activities early than female. Girls are more sincere and dedicated to their study. Girls have more controlled than boys in family that's why they have less chances to indulge in bad hobbies than boys. Age group has significant influence on dropout. Person to belong to 15-19, 20-24 and 25-29 have less likely to dropout 84%, 93% and 94% respectively than 5-9 age group. Person belonging to OBC and General have 21% and 39% less probability than ST. SC has no significant relation to ST. ST are mostly lives in remote areas, so they have higher probability to dropout. Muslims are only who have 1.57 times odds than Hindus with higher level of significance. Other religion has no significant relation to Hindus. This may be due to small sample size of others religion. Muslims are ignored and even rejected to give admission in school. If they get admission, they have problems to be friend with persons of other religion. Distance of school from home is not significant expect in case of primary school. Household expenditure shows that person belongs to richer and richest class has 36% and 27% less probability to dropout respectively. Conclusions The present study tried to understand the differentials in school dropouts for selected background characteristics at Rajasthan. Based on the data from NSSO 64th round, it was found that only 59 percent of the children in the age group 5 to 29 years are currently attending school. As expected, the gender differentials are different in Rajasthan as girls are less likely to dropout than boys. Government

should develop the educational infrastructure in remote tribal areas. It should be insured that a children of backward community and caste will be given privileged in school enrollment and try to be retain them in system. It is important to emphasis here that improving the school infrastructure, quality of education and huge investment in school education can only reduce the extent of dropout to a limited extent. Unless and until there is considerable improvement in the economic status of households and change in the social attitudes of parents, achieving the goal of universalisation of school education will remain a major challenge for India.

- Lalita yadav

Research Scholar,

RRMB University, Alwar Assistant professor,

v.v. govt p.g. college, jalore

Mob. 96945 62441

References :

- Boroah, Vani K (2003): "Births, Infants and Education: An Econometric Portrait of Women and Children in India", Development and Change, 34, pp 67-102.
- Choudhury, Amit (2006), "Revisiting Dropouts: Old Issues, Fresh Perspectives", Economic and Political Weekly, December 16.
- Colclough, C. (1993). "The Impact of Primary Schooling on Economic Development: A Review of the Evidence". World Development, 10:167
- Kaul, Rekha,(2001), "Accessing Primary Education: Going beyond the Classroom", Economic and Political Weekly, Vol. 36, No.2 (Jan. 13-19, 2001), pp. 155-16
- Levy, Mildred B, (1971), "Determinants of Primary School Dropouts in Developing Countries" , Comparative Education Review, Vol. 15, No. 1 (Feb.), pp.44-58
- NUEPA and Govt. of India (2008), "Enrolment-Based Indicators", Report ,National University of educational planning and administration, New Delhi and Department of school education ,

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2022 : एक समीक्षा

– श्रीमती बरनाली राय

सार : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020–21 वीं सदी की पहली शिक्षा नीति है। सन् 1968 और 1986 में बनाई गई नीति जिसमें 1986 की नीति 1992 में संशोधन किया गया था, उसके पश्चात् 34 वर्ष के बाद नई शिक्षा नीति को केन्द्रीय मंत्रिमंडल द्वारा 29 जुलाई 2020 को मंजूरी दी। इस नीति के अनुसार स्कूली शिक्षा एवं उच्च शिक्षा दोनों संस्थानों के लिए एक रूपरेखा प्रदान करने की परिकल्पना की गई है। यह शिक्षा नीति छात्रों को दिलो-दिमाग से भारतीय व भारत के मूल्यों को बढ़ाने पर केन्द्रित करता है। यह नीति शिक्षा के सभी स्तरों पर शिक्षाशास्त्र और प्रचलित पाठ्यक्रम में सुधार का सुझाव देता है तथा भारतीय ज्ञान और विचार को समृद्ध करते हुए पूर्ण आत्म ज्ञान प्रदान करने की एक आदर्शवादी तस्वीर प्रस्तुत करती है। स्कूली शिक्षा की शैक्षिक संरचना की डिजाइन 5334 प्रस्ताव किया गया जिसमें 3 वर्ष से 18 वर्ष की आयु वाले बच्चों को शामिल करता है। इसे नीति ने 2020 के तहत वर्ष 2030 तक सकल नामांकन अनुपात (GEN) 100 प्रतिशत लाने का लक्ष्य रखा गया है।

की वर्ड : शिक्षा नीति, पाठ्यक्रम, शिक्षा शास्त्र, स्कूल शिक्षा, उच्च शिक्षा।

प्रस्तावना :

नई शिक्षा नीति 2020 लाने से पूर्व देश में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था पर व्यापक चर्चा आरंभ हो गई। 1986 की शिक्षा नीति में कई कमियाँ रह गई थी। जिन्हें दूर करने के लिए नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लाने की आवश्यकता पड़ी, साथ ही यह शिक्षा नीति उन उद्देश्यों को पूर्ण करने में सक्षम होगी जिसका स्वप्न महात्मा गांधी और स्वामी विवेकानंद ने देखा था। अगले दशक में भारत दुनिया का सबसे युवा जनसंख्या वाला देश होगा और इन युवाओं को उच्चतर गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराने पर ही भारत का भविष्य निर्भर

करेगा।

इस शोध आलेख के माध्यम से भारतीय शिक्षा की वर्तमान नीति से नयी नीति 2020 किस प्रकार सुधार एवं परिवर्तन का सुझाव देती है प्रस्तुत किया गया है। जून 2017 में डॉ. के. कस्तूरीरंगन की देख-रेख में नई शिक्षा नीति के लिए एक कमेटी का गठन किया गया और 31 मई 2019 को माननीय मानव संसाधन विकास मंत्री को 'ड्राफ्ट एजुकेशन पॉलिसी 2019' सौंपा गया था। इस ड्राफ्ट पर विचारों और सुझावों को आमंत्रित करने के लिए ड्राफ्ट राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2019 में MHRD वेबसाइट पर अपलोड किया गया। केन्द्रीय मंत्रिमण्डल द्वारा 29 जुलाई 2020 को मंजूरी दी गई। यह शिक्षा नीति में 22 सिद्धान्तों का जिसमें 27 बिन्दुओं को चार भागों में बांटकर वर्णन किया गया है।

– राष्ट्रीय शिक्षा नीति भाग I स्कूल शिक्षा।

– राष्ट्रीय शिक्षा नीति भाग II उच्चतर शिक्षा।

– राष्ट्रीय शिक्षा नीति भाग III अन्य केन्द्रीय विचारणीय मुद्दे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति भाग IV क्रियान्वयन की रणनीति।

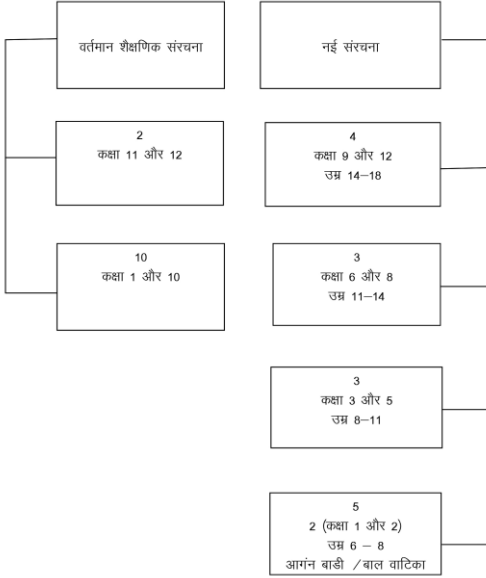
राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भाग I स्कूल शिक्षा यह शिक्षा नीति वर्तमान की 10+2 शिक्षा व्यवस्था को 3 से 18 वर्ष के बच्चों के लिए पाठ्यचर्या एवं शिक्षण शास्त्रीय आधार पर 5+3+3+4 की एक नयी डिजाइन वाले शैक्षणिक संरचना का प्रस्ताव किया।

– Foundational Stage – 3 साल का प्री-प्राइमरी स्कूल और ग्रेड 1, 2 – इस अवस्था में प्रारंभिक बाल्यावस्था का देखभाल और सीखने की नींव मजबूत कर ध्यान दिया गया।

– Preparatory Stage – 3 साल का यह स्टेज कक्षा 3 री से 5 वीं तक की पढाई होगी,

- 3 उच्च प्राथमिक तीन वर्ष के मध्यचरण ग्रेड 6, 7, 8.
- उच्च या माध्यमिक चरण ग्रेड 9, 10, 11, 12.

NEP 2020 के अन्तर्गत HHRO द्वारा बुनियादी साक्षरता और संस्थात्मक ज्ञान पर एक राष्ट्रीय मिशन की स्थापना का प्रस्ताव किया गया है। 2025 तक कक्षा 3 री स्तर तक के बच्चों के लिए आधारभूत कौशल सुनिश्चित किया जाएगा।



भाग I स्कूली शिक्षा प्रावधान –

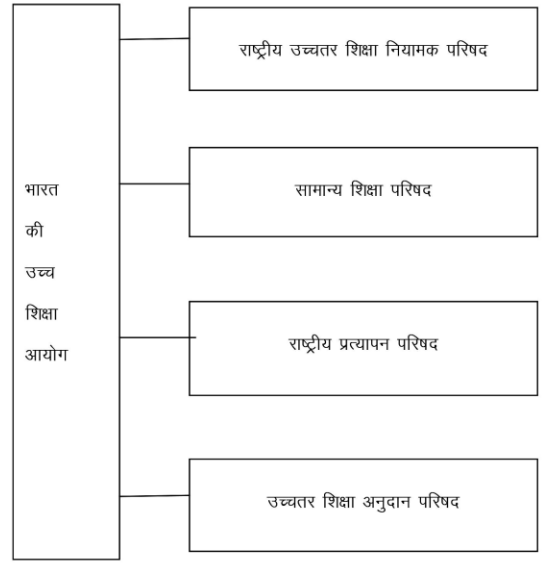
प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा के अन्तर्गत सीखने की नींव को मजबूत करने के लिए ई. सी. सी. ई. पाठ्यक्रम, शिक्षाशास्त्र, मूलभूत साक्षरता तथा संस्थात्मकता जैसे बिन्दुओं का उल्लेख किया गया। जो ई. सी. सी. ई. क्षमता स्थापित करने में सबसे शक्तिशाली माध्यम हो सकता है। सन् 2030 तक 100 प्रतिशत बच्चों के स्कूल तैयार होने का लक्ष्य एवं शिक्षा के सार्वभौमिकरण पर जोर देती है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में 3 से 6 वर्ष की उम्र के बच्चे 10+2 वाले ढाँचे में शामिल नहीं हैं क्योंकि 6 वर्ष के बच्चों को कक्षा 1 में प्रवेश दिया जाता है। नई शिक्षा नीति के अनुसार 3 वर्ष के बच्चों को 5+3+3+4 में शामिल कर प्रारंभिक बाल्यावस्था पर ध्यान दिया गया क्योंकि 85 प्रतिशत

मस्तिष्क का विकास 6 वर्ष की अवस्था से पहले ही हो जाता है। स्कूल स्तर पर डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर फॉर नॉलेज शेयरिंग, उच्च गुणवत्ता युक्त संसाधन की उपलब्धता एवं भंडार होगा जो शिक्षकों और छात्रों को सीखने-सीखाने में तकनीकी हस्तक्षेप के रूप में कार्य करेगा। ड्राप आऊट बच्चों को स्कूल वापस लाने का लक्ष्य 2030 तक तय किया गया, ताकि माध्यमिक स्तर पर पढ़ने वाले बच्चों का नामांकन अनुपात 100 प्रतिशत किया जा सके। भाषायी विविधता संरक्षण में 5 वीं तक की शिक्षा मातृभाषा, स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को अध्ययन करने के माध्यम के रूप में अपनाने पर बल दिया गया है। मातृभाषा को कक्षा 8 और आगे की शिक्षा के लिये प्राथमिकता देने का सुझाव दिया गया है। भाषाई चुनाव में उच्च शिक्षा में संस्कृत और प्राचीन भाषाओं का विकल्प उपलब्ध होगा परंतु छात्र पर भाषा के चुनाव में बाध्यता नहीं होगी। विद्यालय के सभी स्तरों पर शारीरिक शिक्षा पर भी बल दिया गया बागवानी, खेल-कूद, योग, नृत्य, मार्शल आर्ट स्थानीय उपलब्धता के अनुसार कोशिश की जाएगी। कला, विज्ञान, व्यावसायिक तथा शैक्षणिक विषयों एवं पाठ्यक्रम व पाठ्योत्तर गतिविधियों के बीच बहुत अधिक अंतर नहीं होगा। कक्षा 6 टी से ही पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षा को शामिल कर दिया जाएगा और इंटरनेट की व्यवस्था भी की जाएगी। NCERT द्वारा राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा तैयार की जाएगी। 10 वीं और 12 वीं की परीक्षाओं में सुधार और बदलाव किया जाएगा। छात्र के प्रगति के मूल्यांकन के लिए मानक निर्धारक निकाय के रूप में परख नामक एक राष्ट्रीय आकलन केन्द्र स्थापना की जाएगी। छात्र प्रगति के मूल्यांकन एवं भविष्य के निर्णय लेने में सहायता प्रदान करने के लिए। **Rtificial Intelligence** आधारित सॉफ्टवेयर का प्रयोग होगा।

शिक्षण व्यवस्था से संबंधित सुधार में शिक्षकों की नियुक्ति में पारदर्शी एवं प्रभावी प्रक्रिया, कार्य प्रदर्शन के आकलन के आधार पर पदोन्नति तथा राष्ट्रीय अध्यापक

शिक्षा परिषद द्वारा 2022 तक शिक्षकों के लिए NPST का विकास किया जाएगा। NCERT के परामर्श के आधार पर NCFTE का विकास किया जाएगा।

2030 तक अध्यापन के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता 4 वर्षीय एकीकृत बी. एड. डिग्री का होना अनिवार्य किया जाएगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भाग 00 उच्चतर शिक्षा उच्चशिक्षा प्रणाली के पुनर्जीवित करने के लिए कई सुधार प्रस्तावित किए गए हैं। उच्चशिक्षा संस्थानों में सकल नामांकन अनुपात 26.3 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत करने का लक्ष्य रखा गया एवं उच्च शिक्षा संस्थानों में 3.5 करोड़ नई सीटों को जोड़ा जाएगा। स्नातक पाठ्यक्रम में मल्टीपल एंट्री एंड एक्जिट व्यवस्था को अपनाया गया यह इस प्रकार है –



IIT और IIM के समकक्ष वैश्विक मानकों के बहु विषयक शिक्षा एवं अनुसंधान विश्वविद्यालय की स्थापना की जाएगी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भाग III अन्य केन्द्रीय विचारणीय मुद्दे –

व्यावसायिक शिक्षा के अन्तर्गत पेशेवरों को तैयार करने के लिए शिक्षा पाठ्यक्रम में नैतिकता एवं सार्वजनिक उद्देश्य के महत्व का समावेश हो, व्यवहारिक अभ्यास की शिक्षा को भी शामिल किया जाए प्रौद्योगिकी के एकीकरण पर जोर देती है। केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड ऑफ एजुकेशन को मजबूत किये जाने पर बल दिया गया। स्वास्थ्य सेवा, कृषि कानून, प्रौद्योगिकी क्षेत्रों के पुनरुद्धार के लिए महत्व दिया गया है। प्रौढ़ शिक्षा के लिए महत्व दिया गया है। प्रौढ़ शिक्षा के लिए कई सराहनीय कदम उठाए गए हैं। प्रौढ़ को आजीवन अधिगम प्राप्त हो सके इसके लिए उपयुक्त बुनियादी ढाँचा सुनिश्चित किया जाएगा। इस हेतु एप, ऑनलाईन कोर्स/मॉड्यूल, उपग्रह आधारित टी.वी. चैनल, ऑनलाईन किताबें आई.सी.टी से सुसज्जित पुस्तकालय तथा प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र विकसित किए जायेंगे।

भारतीय कला एवं संस्कृति, पर्यटन जो भारत को

बैचलर प्रोग्राम

| अवधि | क्रेडेंशियल | मास्टर प्रोग्राम | |
|--|------------------------|------------------|-------|
| 1 साल | प्रमाण पत्र | | |
| 2 साल | डिप्लोमा | | |
| 3 साल | डिग्री | | 2 साल |
| 4 साल | अनुसंधान के साथ डिग्री | | 1 साल |
| 5 साल का इंटीग्रेटेड बैचलर और मास्टर प्रोग्राम | | | |

4 साल पूरा करने वाले छात्र को रिसर्च के साथ डिग्री प्रदान करती है, जिसे सबसे पसंदीदा विकल्प माना जाएगा। NEP 2020 में एम. फिल् कार्यक्रम को बंद करने का प्रस्ताव है। ऑनलाईन शिक्षा और ओपन डिस्टेंस लर्निंग पर अधिक ध्यान दिया गया। राष्ट्रीय अनुसंधान फाउण्डेशन, एन. आर. एफ. (धारा 179) की स्थापना विश्वविद्यालय के सभी विषयों अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए की जाएगी।

उच्च शिक्षा के कार्य को सुनिश्चित करने के लिए उच्च शिक्षा आयोग की स्थापना की गई, जिसकी चार शाखाएँ होगी –

‘अतुल्य भारत’ बनाती है। इनके प्रति सांस्कृतिक जागरुकता अभिव्यक्ति को उन्नत करना ताकि बच्चों में संज्ञानात्मक और सृजनात्मक क्षमता बढ़ सके। संस्कृति के संरक्षण—संवर्धन के लिए भाषाओं का संरक्षण एवं संवर्धन करना होगा। शास्त्रीय आदिवासी और लुप्त भाषाओं सहित सभी भारतीय भाषाओं को संरक्षित और बढ़ावा देने का प्रयास किए जाएंगे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 और भाग IV

क्रियान्वयन की रणनीति—2020 की शिक्षा नीति के सफल क्रियान्वयन के लिए राष्ट्रीय, राज्य, संस्थागत और व्यक्तिगत स्तर पर एक दीर्घकालीन विजन, विशेषज्ञता की निरंतर उपलब्धता और संबंधित लोगों द्वारा ठोस कदम उठाये जाने की आवश्यकता है। वित्तपोषण सभी के लिए वहनीय और साथ ही गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा हो, किसी भी नीति की प्रभावशीलता उसके कार्यान्वयन पर निर्भर करती है। कार्यान्वयन के लिए कई निकायों द्वारा समन्वित एवं व्यवस्थित तरीके से बहुत सी पहल करनी होगी, सम्बद्ध मंत्रालयों के समन्वय एवं उनसे परामर्श करने के उपरांत केन्द्र एवं शासन दोनों स्तरों पर विषयवार क्रियान्वयन विशेषतः समितियों का गठन किया जाएगा तथा नीति की प्रतिवर्ष संयुक्त समीक्षा की जायेगी, 2030—40 के दशक तक सम्पूर्ण नीति क्रियान्वयन अवस्था में आ चुकी होगी और उसके बाद एक और व्यापक समीक्षा की जाएगी।

निष्कर्ष —

21 वीं सदी के भारत की जरूरतों को पूरा करने के लिये भारतीय शिक्षा प्रणाली में बदलाव हेतु केंद्रीय मंत्रिमंडल ने 2020 की शिक्षानीति को मंजूरी दी इसके सफल क्रियान्वयन होने से भारत विश्व के अग्रणी देशों के समकक्ष पहुंच जाएगा। नई शिक्षा नीति 2020

की डिजाइन 3 साल से 18 साल तक के बच्चों को शिक्षा का अधिकार कानून 2009 के अन्तर्गत रखा गया है। इस नई शिक्षा नीति का उद्देश्य सभी छात्र को उच्च शिक्षा प्रदान करना जिसका लक्ष्य 2025 तक 3 से 6 वर्ष की आयु सीमा के अन्तर्गत पूर्व प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाना स्नातक शिक्षा में विश्वस्तरीय डिजिटल इनफ्रास्ट्रचर शैक्षिक डिजिटल कंटेंट, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, थ्री डी मशीन, डेटा विश्लेषण डिजिटल शिक्षा शास्त्र, जैव प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों का समावेशन कर छात्रों को अत्याधुनिक क्षेत्रों में भी कुशल पेशेवर तैयार करना एवं युवाओं के रोजगार क्षमता में वृद्धि करना।

शोधार्थी

श्रीमती बरनाली राय

एम.ए., एम.एड., एम.फिल्
सहा. प्राध्यापिका
कृति स्कूल ऑफ बिजनेस मैनेजमेंट
रायपुर (छत्तीसगढ़)

निर्देशिका

डॉ. परविन्दर हंसपाल

डायरेक्टर स्कूल ऑफ एजुकेशन
मैट्स विश्वविद्यालय, गुल्लू
आरंग (छत्तीसगढ़)

संदर्भित ग्रंथ सूची :-

1. नीता विरमानी, डॉ. रिमा लांबा, ‘राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक समीक्षा’ A.K. Sharma
Multidisciplinary Research Journal, ISSN,
Jonvary March 2021, Vol-02, Page 140—144
2. राज आर. ए. एस. (2020) नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का संक्षिप्त विवरण।
3. hindi-rajras-in
4. www-airmri-com
5. timesnowhindi-com
6. drishtijas-com

सामाजिक यथार्थ का दर्पण : डेथ कान्ट स्टॉप मी

— डॉ. गायत्री देवी लालवानी

भारतीय दलित लेखन मानवीय हक एवं सामाजिक न्याय के पक्ष में उभरी साहित्यिक मुहिम है। इस मुहिम की सशक्त बुनियाद रही है कबीर, रैदास, महात्मा बुद्ध, महात्मा फूले और आम्बेडकरवादी विचारधारा। इस मुहिम को मुकमल बनाया दलित आत्मकथाओं ने। सर्वप्रथम डॉ. भीमराव आम्बेडकर का आत्मकथन माने जाने वाले 'मी कसा झालो' से प्रेरणा लेकर मराठी दलित साहित्यकारों ने आत्मकथा लेखन की शुरुआत की। हिंदी में भी दलित लेखकों ने अपनी आत्मकथा द्वारा दलित समाज के यथार्थ को समाज के सम्मुख रखने का प्रयास किया। ये सभी आत्मकथाएं दलित समाज के जीवन की पीड़ा, वेदना, दर्द, दलन का प्रामाणिक दस्तावेज मानी जा सकती है। इसके अतिरिक्त दलित जीवन की समस्याएं संघर्ष, रीति-रिवाज, अंध-श्रद्धा आदि का विस्तृत वर्णन इन आत्मकथाओं में मिलता है। भारतीय समाज की उस सच्चाई को यह आत्मकथाएं पेश करती हैं। जहां हमारा ध्यान ही नहीं गया या ये कहें कि, देखकर भी अनदेखा किया गया। दलित आत्मकथाकार समाज में समानता, बंधुता, स्वतंत्रता के पक्षधर हैं। उनकी आत्मकथाएं सिर्फ दलित जीवन का ही चित्रण नहीं करती बल्कि सड़ी-गली परम्पराओं, प्रथाओं का पर्दाफाश करते हुए नई व्यवस्था, नया समाज बनाने की बात करती हैं।

डॉ. अभय परमार ने हिन्दी, गुजराती साहित्यकार के रूप में एक विशिष्ट पहचान बनाई है। वे अत्यंत सरल, सहज स्वभाव के धनी है। सामाजिक सुधार एवं परिवर्तन को जीवनमंत्र मानकर वे नित समाज कल्याण में प्रयासरत रहे हैं। डॉ. अभय की आत्मकथा 'डेथ कान्ट स्टॉप मी' सन् 2017 में ज्ञान प्रकाशन, कानपुर से

प्रकाशित हुई। आत्मकथन का लेखन कोई साधारण कार्य नहीं होता। ओमप्रकाश वाल्मीकि इस विषय पर अपनी आत्मकथा 'जूठन' की भूमिका में लिखते हैं 'एक ऐसी समाज-व्यवस्था में हमने सांसें ली हैं, जो बेहद क्रूर और अमानवीय है। दलितों के प्रति असंवेदनशील भी ... इन अनुभवों को लिखने में कई प्रकार के खतरे थे। एक लंबी जद्दोजहद के बाद मैंने सिलसिलेवार लिखना शुरू किया। तमाम कष्टों, यातनाओं, उपेक्षाओं, प्रताड़नाओं को एक बार फिर जीना पड़ा। उस दौरान गहरी मानसिक यंत्रणाएँ मैंने भोगी। स्वयं को परत-दर-परत उधेड़ते हुए कई बार लगा-कितना दुखदायी है यह सब। कुछ लोगों को यह अविश्वसनीय और अतिरंजनापूर्ण लगता है।' डॉ. अभय अपनी आत्मकथा की भूमिका में दया पवार जी की बात को रखते हुये लिखते हैं 'एक दलित आत्म कथनकार की भूमिका उस पोरताज की तरह होती है जो पूरी ताकत से अपने नंगे बदन पर कोड़े बरसाता है और उन कोड़ों की मार की पीड़ा ही उसकी आत्माभिव्यक्ति है इसमें ललित साहित्यानंद दूढ़ने वाले को निराशा ही हाथ लग सकती है।' अभय अपने इन अनुभवों के संदर्भ में लिखते हैं—'जिन्दगी के आंगन में बेतरतीब बिखरे पड़े लम्हों को बटोरने में उनकी तपीश से कई बार ऊँगलियाँ झुलसी हैं तो कई बार यादों की जड़ों तक पहुँचने की जद्दोजहद ने हथेलियों को मिट्टी की सौँधी गंध से महका भी दिया है। मैंने वक्त को मुट्टी में बांधकर धीरे-धीरे रेत की तरह सरकाने का उपक्रम किया है, पर वक्त तो आखिर वक्त ही है, भला वह कहाँ रूकता है किसी के लिए। फिर भी हवा में बिखरते अलफाज ज्यादातर अपनी मर्जी से तो कुछ-कुछ मेरे कहने पर रूके हैं पर अपनी-अपनी शर्त पर। जो भी हो पर इन लम्हों की लुका-छुपी के खेल ने बातों-बातों में मुझसे ऐसी अन्दरूनी चीजें उगलवा ली है जो मेरे लिए अभिव्यक्ति के दायरे से कोसों दूर थी। अपनी अनगिनत मर्यादाओं के साथ 'डेथ कान्ट स्टोप मी' के रूप में मैं आपकी हथेलियों और ऊँगलियों से

होता हुआ दिल तक पहुँचाना चाहता हूँ और मुझे यकीन है मैं सफल भी रहूँगा क्योंकि जो बातें आपके सामने आयेंगी इसमें से थोड़ी बहुत तो आपको अपनी भी लगेगी।.....मैं भी उन सभी साहित्यिक विचारकों के साथ अपनी सहमति जताना चाहूँगा जो कहते हैं कि 'आत्मकथन' लिखने के लिए वैचारिक स्पष्टता—प्रतिबद्धता, प्रामाणिकता, निर्ममता और बेबाकपन की आवश्यकता होती है। यह विधा कई बार नंगी सच्चाई को प्रकट करने का साहस माँगती है।³

अभय की आत्मकथा 'डेथ कान्ट स्टॉप मी' चौदह अध्यायों में विभक्त है। एक सौ बारह पेज की इस आत्मकथा में लेखक के दादा जी जेठाभाभा के जीवन प्रसंगों से लेकर लेखक का आदिवासी आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज, संतरामपुर के लिए अध्यापक के रूप में चयन हुआ, तब तक की जीवन कथा समाहित है। इस आत्मकथन में वह सब—कुछ है, जो एक दलित आत्मकथा में पाठक वर्ग को मिल सकता है। दलित समाज के जीवन व्यथा, वेदना, पीड़ा उनके शोषित जीवन की गाथा, मनुवादी मानसिकता के चलते हर कदम पर मिलता अपमान, चाहते हुए भी प्रगति के पथ पर आगे न बढ़ पाने की विवशता, उस विवशता और अपमान के चलते हीनता का अनुभव होना, खेलने—कूदने के बचपन के दिनों में मवेशियों को चराना, घर के कामों में हाथ बटाँना आदि। अभय परमार जी ने इन सभी विकट परिस्थितियों के चलते भी अपना रास्ता स्वयं तय किया। शिक्षा का उजाला उनके परिवार में आ चुका था इसलिए शिक्षा के सूरज को लेकर आगे बढ़े और जीवन की उन कठिनाइयों का सामना करते हुए, अपमान सहते हुए भी दलित समाज के लिए ही नहीं समस्त मानव—जाति के लिए प्रेरणा रूप बने। अभय अपने आत्मकथन की शुरुआत में लिखते हैं 'जिन्दगी के लगभग पचास साल के सफर के बाद मुड़कर देखता हूँ तो हैरान सा रह जाता हूँ। जिन्दगी के उन सभी अनगिनत अनुभवों को कलमबद्ध करना मेरे

बस की बात तो नहीं है, फिर भी कुछ घटनाएँ ऐसी हैं जिन पर से अगर समय की धूल को हटाया जाए तो वे आज भी उस मोड़ पर कायम खड़ी हैं ठीक वैसे ही जैसे वह दशकों पहले घटित हुई थी।'⁴ अर्थात् आज भी मनुवादी मानसिकता का शिकार दलित समाज हो रहा है। जैसे दशकों पहले वह गुलाम था। देश को आजादी मिली परन्तु दलित समाज को बेड़ीयों से मुक्त नहीं किया गया। आत्मकथाकार अभय का जीवन भी उनके समाज को मिली अभिशप्तता से ग्रस्त रहा है। शिकंजे का दर्द की आत्मकथाकार सुशीला जी भी इसी गुलामी रूपी शिकंजे के संदर्भ में लिखती हैं 'शिकंजा एक नहीं, कई थे। शिकंजे तब भी थे, दर्द तब भी था। शिकंजे के दर्द की कथा चल रही है, जिन्दगी के साथ—साथ।'⁵

अभय के दादा जेठाभाभा सेवाभावी, स्वतंत्र मिजाजी और अन्याय के आगे कभी न झुकने वाले व्यक्ति थे। लेखक के गांव में मात्र जेठाभाभा ही ऐसे व्यक्ति थे, जो पढ़ना—लिखना जानते थे इसलिए आजादी के बाद बनी पंचायती राजव्यवस्था के सदस्य भी बने। बचपन से ही लेखक अपने दादाजी को दूध पहुँचा कर उनकी सेवा करते हुए यह गुण भी उन्हें उनके दादाजी से मिला था। लेखक के दादाजी हमेशा लेखक की तारीफ किया करते थे कि, वह एक दिन जरूर कुछ बनेंगे। स्वयं लेखक के शब्दों में 'जब कोई जेठाभाभा से बच्चों और परिवार के बारे में पूछता तो वह मेरी ओर देखकर कहते देखो यह दिखने में काला जरूर है पर मन इसका साफ है। जरूर एक दिन कुछ करके दिखाएगा।' तब मुझे उनकी बातें इतना महत्वपूर्ण नहीं लगती थी, पर आज मैं महाविद्यालय के प्रधानाचार्य के पद पर पहुँचा हूँ तो सोचता हूँ कि कितनी ताकत होती है बुजुर्गों के आर्शीवचन में।'⁶ समाज सदियों से गांवों से दूर हाशिये पर रहकर पशुवत जीवन जीते आया है। वर्ण—व्यवस्था का शिकार दलित समाज नारकीय जीवन बिताने को मजबूर रहा है। 'वर्ण—व्यवस्था ने भारत को बिखरा कर रख दिया है और एकता को बुरी तरह कुचल डाला है

जिसके परिणामस्वरूप भारत की हजारों वर्षों की नासूर बनी गुलामी का इतिहास और विभाजन की त्रासदी से राहत पाना मुश्किल हो रहा है। भारत को आजादी के पूर्व दो घड़ों में बिखराने की कवायत के बाद भी श्रमजीवी समाज के लगभग बीस फीसदी हिस्से को दलित-अछूत कहकर तिरस्कृत किया जा रहा है। अपने ही देश की विशाल आबादी को अधिकार और आजादी से वंचित रखकर उस पर अन्याय-अत्याचार लगातार जारी है। चेतना शून्य दलित समाज के दमन और उत्पीड़न की प्रक्रिया, दुत्कार और मानसिक त्रास थमने के, समाप्त होने के आसार नजर नहीं आते परिणामस्वरूप समतामूलक समाज की आधारशीला और नींव हाशिए में अपने अस्तित्व के लिए छटपटा रही है।⁷

दलित समाज हजारों वर्षों से शिक्षाविहीन रहा लेकिन जब उसके हिस्से शिक्षा आने का समय आया तो उनको कई ऐसे शिक्षक मिले जिन्होंने द्रोणाचार्य की भूमिका निभाई। दलित समाज के बच्चों को कक्षा में सबसे पीछे बिठाना, उनका बात-बात पर अपमान करना, उन्हें यह एहसास दिलाना कि वे शिक्षा के लिए नहीं बने वे तो अपने परम्परागत कार्यों के लिए जन्मे हैं। वे पढ़-लिखकर क्या करेंगे? आदि बातों का सहारा लेकर शिक्षा से वंचित रखा गया। वांसडोल जहाँ लेखक का जन्म हुआ उसके पास ही कुकड़िया गाँव के सरकारी स्कूल के बारे में बताते हुये वे लिखते हैं-‘वांसडोल से करीब आधा किलोमीटर दूर कुकड़िया गाँव में सरकारी प्राइमरी स्कूल बना था। आज भी पुरानी पीढ़ी के लोग अपने बुरे अनुभवों को याद करते हैं-कुकड़िया में ही सरकारी प्राइमरी स्कूल बना था जहाँ ब्राह्मण शिक्षक हुआ करते थे। दलितों के बच्चों को इतनी दूर बिठाया जाता कि, जहाँ से इन्हें न तो ब्लैक बोर्ड सही ढंग से नजर आता था और न मास्टर साहब की आवाज साफ सुनाई देती थी। बस सुनाई देती थी तो उनकी माँ-बहन की गालियाँ। ब्राह्मण शिक्षक यही

चाहते थे कि, कोई दलित बच्चे पढ़ न पाये। जब कभी अनपढ़ दलित अपने बच्चे को प्रवेश दिलवाने जाते तो वह पूछते-क्या नाम लिखें? अनपढ़ दलित बच्चे के नाम का उच्चारण स्पष्ट रूप से करना नहीं जानते थे, कुछ भी बोल देते थे और ब्राह्मण शिक्षक वही नाम लिख देता था। जैसे रामचंद्र के लिए रामसो, पुरुषोत्तम के लिए परसो। स्कूल सर्टीफिकेट में भी ऐसे जातिगत अपमान सूचक शब्द लिख देते थे कि दलित लड़का बड़ा होकर पढ़-लिखकर अफसर बने पर अपना स्कूल सर्टीफिकेट दूसरों को दिखाने में बड़ा ही संकोच अनुभव करे। ब्राह्मण मास्टर का यही मूलमंत्र था अगर दलित पढ़-लिख गये तो हमारी गुलामी कौन करेगा।⁸

दलित समाज ने शिक्षा को मूलमंत्र बनाया और लेखक के दादाजी से लेकर सभी ने शिक्षा को महत्व दिया था। उनकी दादी की असामयिक मृत्यु ने उनके पिताजी को किसान बना दिया और पढ़ने का अवसर नहीं मिल पाया लेकिन उनका गुजराती भाषा का ज्ञान गजब का था। उन्होंने अपनी चारों सन्तानों को पढ़ने के लिए स्कूल भेजा क्योंकि शिक्षा ही उनके अंधकारमय जीवन का उजाला थी। यह बात वे भली-भाँति जानते थे। लेखक के पिताजी घर की जिम्मेदारियों के कारण पढ़ नहीं पाये और लेखक के काका पढ़ कर अच्छी नौकरी करने लगे तो उनका परिवार आर्थिक रूप से सक्षम हो गया। कहने का आश्रय कि, शिक्षा मानव-जीवन की दशा बदलने में सहायक होती है। लेकिन जहाँ शिक्षा ना मिले वहाँ लेखक के परिवार की तरह आर्थिक बोझ व्यक्ति को उतरन पहनने पर मजबूर कर देता है व्यक्ति परिस्थिति के हाथों मजबूर हो जाता है। अपने परिवार की आर्थिक स्थिति का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं-‘लगातार अकाल, सिर्फ दो एकड़ की जमीन और खाने वाले छः लोग। एक साधो तो तेरह टूटते थे। अगल-बगल के कुछ लोग हमें इन कपड़ों में देख थोड़ा बहुत मजाक भी कर लिया करते थे। मैं अर्पण की सफेद कमीज पहन कर स्कूल जाता था

उसकी बाईं तरफ सरस्वती विद्या मंदिर नरोडा का लोगों छपा होता था। टीचर उसे निकाल देने के लिए कहते थे, पर यह नामुमकिन था अगर लोगों निकाले तो शर्ट फट सकती थी। शंकरचारकपास या गंगा मकाई की कॉटन की थैलियों को धो-धोकर साफ करके हम इनमें से अपने अंडरवियर सिलवा लेते थे। हालांकि बस्ती के लोगों का यही हाल था। चुनाव प्रचार में काँग्रेस या दूसरी पार्टी वालों ने दीवारों पे या चौराहों पे लगाये बैनरों को निकलवाकर अपना चड्डी-बनियान बना लेते थे। यूरीया खाद की नायलोन की पच्चीस किलो की बेग से हम सभी भाई बहनों के स्कूल के बैग बन जाते थे। बस्ती में ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं था जिसकी पैन्ट में पीछे से थिंगली न लगी हो। पैन्ट का कलर और उसके पीछे के भाग पर लगायी गयी थिंगली का कलर भी ज्यादातर अलग ही होते थे। हालांकि इसमें कुछ भी अजीब नहीं लगता था, क्योंकि हर किसी का यही हाल था।⁹

इसी संदर्भ में लेखक आगे लिखते हैं—‘हम चारों भाई-बहन सहित माँ और पिताजी ने कभी नये कपड़े और जूते नहीं खरीदे थे। अहमदाबाद में रह रहे हमारे चाचा और फूफा का परिवार उनके पुराने कपड़े और जूते हमारे लिए भेज देते थे। हालाँकि वह इतने भी तो पुराने नहीं होते थे। कुछ तो बिल्कुल नये ही होते थे। राजेश फूफा के कपड़े पिताजी और सुरेशभाई पर सेट हो जाते थे, जबकि शान्ता भूवा और राजूकाकी के कपड़े मेरी माँ पहन लेती थी, कुछ-कुछ कल्पना और विलास के हिस्से में भी आता था। अर्पण के कपड़े मैं पहन लेता था। आज भी मेरे घर की गुदड़ी के टाँके उधेड़कर देखा जाये तो इनके अवशेष जरूर मिलेंगे। यह हमारी मजबूरी थी।’¹⁰

दलितों में अन्तविरोध की बात प्रत्येक आत्मकथाकार ने अपने आत्मकथन में कही है। जब दलित समाज के कुछ लोग शिक्षा प्राप्त कर आगे बढ़ते हैं, अच्छे पदों पर कार्य करते हैं, तब वह अपने ही समाज

से घृणा करने लगते हैं। क्या ऐसा व्यवहार उन्हें शोभा देता है? उन्हें चाहिए कि, जिस प्रकार वे आगे बढ़े हैं, वैसे ही अपने समाज के उत्थान में अन्य लोगों को भी आगे लेकर आए, उन्हें आगे आने में उनका मार्गदर्शन करे, उनकी सहायता करें। लेखक के पिताजी को हिस्से में प्लोट मिला था लेकिन आर्थिक रूप से वे इतने समर्थ नहीं थे कि, उस पर मकान बनवा सके। लेखक के छोटे काका गोविन्दकाका के हिस्से मकान आया था जिसमें लेखक का परिवार रहता था क्योंकि गोविन्दकाका की नौकरी थी। इसलिए वे उनके परिवार के साथ बाहर रहते थे। वे सभी लेखक के परिवार के साथ सवर्णों जैसा बर्ताव करते। स्वयं लेखक के शब्दों में—हम गोविन्द काका के घर में ही रहते थे। इसलिए उनका हम पर अबाधित अधिकार था। कल्पना, विलास, सुरेश और मैं उनके छोटे-मोटे कामों के लिए हरदम तैयार रहते थे। पूरा वेकेशन माँ चुप-चाप उन्हें रोटियाँ बनाकर खिलाया करती थी। इन सबके बावजूद भी उन लोगों का हमारे साथ व्यवहार कुछ अजीब-सा होता था। वे वैसे ही व्यवहार करते जैसा कोई सवर्ण अनपढ़ दलित के साथ करता हो। शान्ताभूवा, जशुभूवा, माणेकभूवा हमारी प्लेट में चाय नहीं पीती थी। या तो वे अलग माँजी हुई कटोरी मँगवाती या फिर ग्लास में ही चाय पीती थी। हाँलाकि उनके इस प्रकार के व्यवहार को लेकर माँ या बापूजी ने कभी भी आपत्ति नहीं की थी। नतमस्तक हम लोगों ने अपना स्थान स्वीकार कर लिया था और करें भी तो क्या करें? कोई चारा भी तो नहीं था। वे लोग सुबह जगने के तुरंत बाद शौच के लिए निकल पड़ते, बाद में नहाते और प्रेस किये हुए स्वच्छ कपड़े पहन रंगीन गोगल्स लगा लेते और माथे पर धूप से बचने के लिए जींस की टोपियाँ भी पहन लेते। उनके बदन बिल्कुल सफेद थे, पास खड़े रहो उनसे घी-दूध की खूशबू आती थी। जबकि हमारा हाल बेहाल था। शौच का कोई ठिकाना नहीं जिसका खाने का कोई ठिकाना न हो भला उसके शौच का ठिकाना

कैसे होगा?"¹¹

अभय के जीजाजी को एम.बी.बी.एस. के फाइनल ईयर में साजिश के तहत फेल कर दिया जाता है। उनका गुनाह इतना था कि, वे दलित थे। मेडिकल में दलित, आदिवासी छात्रों को फेल कर दिया जाता है ऐसा उनके जीजाजी आत्मकथाकार को बताते हैं लेकिन वो अपने जीजाजी की बात पर विश्वास नहीं करते हैं। आत्मकथाकार बताते हैं कि, यह बात उन्हें तब समझ आयी जब वे उच्च अभ्यास हेतु स्वयं अहमदाबाद आते हैं वे लिखते हैं—'उस समय यह बात मेरी समझ में नहीं आयी थी, लेकिन जब मैं उच्च अभ्यास हेतु गुजरात विश्वविद्यालय अहमदाबाद गया और नरसिंह भगत छात्रालय में रहने लगा तब मुझे उनकी बात की सच्चाई मालूम हुई। हॉस्टेल में अलग-अलग शाखाओं के छात्र रहते थे। और जात-पाँत को लेकर सबको परेशानी झेलनी पड़ती थी। कुछ छात्र तो अपना पता नरसिंह भगत हॉस्टल नहीं लिखवाते थे क्योंकि इससे भी लोगों को पता चल जाता था कि यह अनुसूचित जाति या जनजाति का छात्र है। हॉस्टल में रहने वाले छात्रों में सर्वाधिक परेशान मेडिकल के ही छात्र होते थे।'¹²

इस प्रकार लेखक ने अपने जीवन के अच्छे-बुरे सभी अनुभवों को इस आत्मकथा के माध्यम से हमारे समक्ष रखा है। दलित समाज के यथार्थ को, उनकी समस्याओं को, उनके साथ समाज में हो रहे दुरव्यवहार, नवरात्रि उत्सव, खेतों में मवेशी चराना, खेत के काम करना, भूरी भैंस, प्रकृति-चित्रण, दलितों में 'गरो' नामक जाति, 'तुरी' नामक दलित कौम, गर्मी की छुट्टियों में पक्षियों के शिकार, आर्थिक बदहाली, आत्मकथाकार के अन्य तीन काकाओं का व्यवहार, लेखक की भाभी लाडू के ट्रांसफर, दलित छात्र के साथ भेदभाव, दसवीं की परीक्षा में फेल होने की घटना एवं नये मकान की नींव खुदाई, लेखक के नेतृत्व में कई बार कक्षाओं में संविधान निर्माता बाबा साहब आंबेडकर

की तस्वीर लगाना, आरक्षण के समर्थन में रैली निकालने का निश्चय करना, मई की गर्मी के दिनों में अपनी सहपाठी सुरेखा मिस्त्री के आग्रह करने के कारण उसके साथ जीवन में प्रथम बार आइसक्रीम खाना, बिजली के बिल के लिए दी गई रकम को लेखक के द्वारा आइसक्रीम पर खर्च करना, पुलिस तंत्र के भ्रष्टाचार और अमानवीय व्यवहार, इडर में लगने वाले आठम के मेले का सौंदर्य, रानी तालाब, गंभीरपुरा की घाटियों, इडरीया गढ़, रूठी रानी का मालिया, पवित्र शिव मंदिर, जैन मंदिर, अंग्रेजों द्वारा निर्मित चूड़ हाउस लाइब्रेरी, खरीदी बाजार, रामचन्द्र विहार नामक ऐतिहासिक स्थल आदि का वर्णन कर प्राकृतिक सौंदर्य का चित्रण किया है।

— अंत में गुजरात युनिवर्सिटी में बिताए पल, नरसिंह भगत, छात्रालय में एडमिशन, हॉस्टेल में दलित छात्रों के बीच अन्तर्विरोध, समाजशास्त्र विभाग के अध्यापक से युनिवर्सिटी छात्रालय में प्रवेश हेतु अरजी करना और उनके द्वारा अपमानित होना, रोहित साहब, रघुवीर चौधरी और महावीरसिंह चौहान साहब का गुरु के रूप में मिलना, एम.ए. में लघुशोध प्रबंध के लिए लेखक का चुना जाना, प्रोफेसर रघुवीर चौधरी के निर्देश में लघुशोध प्रबंध कार्य करना, उनके साथ पढ़ने वाली छात्रा का डिजिटेशन करवाने में आर्थिक सहयोग करना, एम.ए. में लेखक का फर्स्ट आना और अंत में लेखक का आदिवासी आर्ट्स एण्ड कॉमर्स कॉलेज, संतरामपुर में नौकरी के लिए चुना जाना तक का वर्णन लेखक ने किया है।

डॉ. अभय परमार ने अपने जीवन की एक लम्बी यात्रा तय की है उनके जीवन में उतार-चढ़ाव, अनुकूल कम, प्रतिकूल परिस्थितियाँ ही अधिक रही हैं। दलित आत्मकथा का उद्देश्य समाज में समानता, बंधुता की नयी व्यवस्था करना है। अनुभवों की सच्चाई ही दलित आत्मकथा लेखन की कसौटी है। अभय समाज को सही दिशा मिले महिलाएं और बच्चे शोषण और अन्याय से

मुक्ति प्राप्त करे यह जरूरी समझते हैं। साथ ही मानवीय अधिकारों की मांग भी करते हैं। उनका आत्मकथन उनके जीवन का रोना-धोना नहीं है अपितु इस आत्मकथन के माध्यम से दलित पीड़ित, शोषित पूरे मानव समाज के लिए व्यवस्था से मुक्ति व मैत्रीभाव की मांग अभय जी की रही है। समाज में जरूरत है तो मानसिकता में परिवर्तन की। हम सभी मनुष्य हैं एवं मनुष्य के रूप में ही हमारी अस्मिता की पहचान हो ऐसा ही दलित समाज एवं अभय जी का आशय है। यह उनका अधिकार भी है। उनकी आत्मकथा दलित समाज का दर्पण है। यह आत्मकथा उनकी नहीं वरन पूरे दलित समाज की आत्मगाथा है। अभय की आत्मकथा व्यक्ति को किसी बंधन में नहीं बांधती अपितु सारे बंधनों से मुक्त करती है, साहित्य व्यक्ति को बांधने का नहीं बंधनों से मुक्ति का साधन है।

— डॉ. गायत्रीदेवी जे. लालवानी

सम्प्रति : आसिस्टेंट प्रोफेसर,
हिंदी विभाग श्री कृष्ण प्रणामी आर्ट्स कॉलेज, दाहोद
सम्पर्क : सी-3 पशुपतिनाथ नगर,
सेंट मेरी स्कूल के पास गोदीरोड, दाहोद-389151

संदर्भ:-

- 1 जूठन-ओमप्रकाश वाल्मीकि-भूमिका से
- 2 डेथ कान्ट स्टॉप मी-डॉ. अभय परमार-भूमिका से
- 3 वही भूमिका से
- 4 डेथकान्ट स्टॉपमी-डॉ. अभय परमार-पृ-9
- 5 शिकंजे का दर्द-सुशीला टाकभौरे-पृ-17
- 6 डेथ कान्ट स्टॉप मी-डॉ. अभय परमार-पृ-10.
- 7 आश्वस्त-फरवरी-2020, पृ-15
- 8 डेथ कान्ट स्टॉप मी-डॉ. अभय परमार-पृ-11
- 9 वही-पृ-59
- 10 वही-पृ-59
- 11 वही-पृ-6
- 12 वही-पृ-61

दलित स्त्री का संघर्ष और साहित्य

- डॉ. ललिता कौशल

भारतीय सामाजिक संरचना में स्त्री की दोगम स्थिति केवल स्त्री-पुरुष लैंगिक विभेद से ही तय नहीं होती, बल्कि स्त्री की भागीदारी सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक क्षेत्र और आर्थिक व्यवहार से निश्चित होती है। आज दलित महिलाओं की समस्याएँ बहस के केंद्र में आ गई हैं। दलित महिलाओं की समस्याएँ और संघर्ष आम महिलाओं से अलग है, क्योंकि शैक्षिक स्तर पर, सामाजिक स्तर पर, सभी दृष्टियों से वह सीढ़ी के सबसे निचले पायदान पर है, जहाँ गरीबी, अशिक्षा, जातिगत भेदभाव के अतिरिक्त अनेक प्रकार के शोषण उसकी नियति बना दी गई है।

अमेरिका नारीवाद में जिस तरह ब्लैक फेमिनिज्म की अलग संरचना सामने आती है, उसी तरह भारतीय नारीवाद के संदर्भ में दलित स्त्री की भी विशेष भूमिका है। भारतीय समाज में दलित स्त्री का संघर्ष बहुकोणीय है। उसकी सबसे बड़ी चुनौती, इस समाज में रहते हुए, नारीवादी आंदोलन में जाति के प्रश्न को उठाने की है। दूसरी तरफ समग्र दलित आंदोलन में स्त्री की अपने लिए जगह बनाने की जरूरत है और तीसरा भारतीय समाज में व्याप्त मनुवाद के विरोध में संघर्ष का है। इस तरह के दलित नारी को कई मोर्चों पर एक साथ जूझना पड़ रहा है।

सन् 1975 में संयुक्त राष्ट्र संघ के साथ भारत सरकार का जो अनुबंध हुआ था, उसी सरकारी पहल पर 'सोशल इंजीनियरिंग' दौर शुरू हुआ था। उससे पहले सजग, सचेत स्त्री-विमर्श का कोई विचार या सिद्धांत विकसित नहीं हुआ था। संविधान के तहत स्त्री से जुड़े सवाल भले ही स्वीकृति पाते रहे। इससे पूर्व कई राष्ट्रीय चेतना आंदोलनों में भी स्त्री की भूमिका और उसके अधिकारों के लिए आवाज उठती रही। लेकिन यह बात आज भी सही है कि दलितों में भी भारतीय दलित स्त्री अधिक दलित है। दलितों की आवाज

उनकी वेदना और उत्पीड़न की स्थितियों को, साहित्य रचना में अलग और विशेष महत्त्व मिलने पर, यह विचार भी जोर पकड़ता गया कि दलितों के दुःख-दर्द को उसी जाति के रचनाकार भोगे हुए यथार्थ के रूप में बेहतर अभिव्यक्ति दे सकते हैं। जबकि उच्चवर्गीय लोग उस पीड़ा को घनीभूत संवेदना के स्तर पर व्यक्त नहीं कर सकते। इसी विचार के तहत दलितों द्वारा रचित दलित साहित्य सामने आने लगा है। दलित साहित्यकारों में दलित लेखिकाओं की संख्या कम है, लेकिन फिर भी इनका लेखन अलग से पहचान बना रहा है। लेखन के लिए जिस आधारभूत योग्यता की आवश्यकता रहती है, वह शिक्षा से आती है लेकिन दलित स्त्रियों में साक्षरता की दर बहुत कम है। पढ़ने-लिखने और उच्च शिक्षा की कमी के साथ-साथ उनमें विचारशीलता का भी अभाव है। दलित महिलाओं की समस्याएँ जिस रूप में हमारे सामने आती हैं, उसमें ऐसे पारिवारिक दबाव भी हैं कि उस माहौल में लिखने की स्वतंत्रता वे नहीं जुटा पा रही हैं।

महात्मा ज्योतिराव फुले और उनकी पत्नी सावित्रीबाई फुले ने दलित स्त्रियों को शिक्षित करने का बीड़ा उठाया था। उन्होंने सनातनियों के नारी संबंधी बंधनों को चुनौती देते हुए तथा परिवार के विरोध को सहते हुए गाँव-गाँव में अनेक पाठशालाएँ खोलीं, ताकि शिक्षित होने के बाद नारी सक्षम होकर चिंतन, मनन और लेखन के माध्यम से अपने अधिकारों के लिए स्वयं आवाज उठा सके। इस क्रांतिकारी आंदोलन को आगे बढ़ाने और ठोस मूर्त रूप देने का कार्य बाबा साहेब अम्बेडकर ने किया। डॉ. अम्बेडकर समाज में स्त्रियों की समानता और स्वतंत्रता के हिमायती थे। उन्होंने महिलाओं की सभा को संबोधित करते हुए कहा था, 'मैं किसी समाज की प्रगति का अनुमान इस बात से लगाता हूँ कि उस समाज की महिलाओं की कितनी प्रगति हुई है। उनका मानना था कि यदि स्त्रियों की शिक्षा को पुरुषों की शिक्षा के साथ-साथ आगे बढ़ाया जाए तो हम जल्दी ही अच्छे दिन देखेंगे और हमारी प्रगति अत्यंत

तीव्र होगी।' उनकी दृष्टि से किसी भी समाज की उन्नति का मापदंड नारी है—पुरुष नहीं।

धीरे-धीरे अनेक जागरूक दलित महिलाएं आगे आकर शिक्षा का प्रसार करने लगीं। तुलसी बाई नामक दलित महिला ने अपने पति के साथ मिलकर 'चोखामेला' शीर्षक अखबार चलाया। बुद्ध-फुले अम्बेडकर की विचारधारा से ओतप्रोत साहित्य सम्पूर्ण भारत में रचा जाने लगा। महाराष्ट्र की महिलाओं में सर्वाधिक जागरूकता पैदा हुई, क्योंकि महाराष्ट्र को महात्मा फुले और बाबा साहेब कर्मभूमि होने का गौरव प्राप्त है। इसलिए भारतीय दलित स्त्री लेखन में मराठी पृष्ठभूमि की लेखिकाओं का सर्वाधिक साहित्यिक योगदान रहा है। इनमें बेबी कांबले, शांताबाई कांबले, कुमुद पावड़े, जाना बाई गिर्हे, उर्मिला पवार, उषा बाद्य, प्रमिला लीला संपत, प्रज्ञा लोखण्डे, सुलेखा कुंभारे, सरिता सांभुले, सरला ठमके, हीरा पंवार आदि नाम उल्लेखनीय हैं।

मराठी में बेबी कांबले की आत्मकथा 'जीणं आमूचं' (जीना हमारा) भारतीय दलित स्त्री की पहली आत्मकथा मानी जाती है। इसमें एक सजग स्त्री की स्त्रीवादी चेतना ध्वनित हुई है, जो अपने समाज में स्त्रियों के साथ होने वाले अमानुषिक व्यवहारों को देखकर त्रस्त है। लेखिका पुरुष सत्तात्मक समाज की उस व्यवस्था को भी बदलना चाहती है, जिसमें रहकर स्त्री उम्र भर दुःख और यातनाएँ भोगती है। दलित स्त्री के जीवन का सत्य लेखिका ने मार्मिक रूप से चित्रित किया है, "गुलामी की जंजीरे जगत ने हमारे हाथों में डाल दी, पर आखिर हम भी तो इंसान हैं न! हमें भी किसी और पर वर्चस्व जमाने की इच्छा होती ही होगी।' शांताबाई कांबले की आत्मकथा 'मेरे जनम की चित्रकथा' भी इसके साथ ही प्रकाशित हुई। इसमें समूचे दलित समाज की विषम परिस्थितियों को वाणी मिली है और साथ ही लेखिका के आत्मसम्मान व अस्मिता के तीव्र बोध का साक्षात्कार भी होता है। नेशनल फेडरेशन ऑफ दलित विमन की संस्थापक

सदस्या कुमुद पावड़े की आत्मकथा 'अन्तःस्फोट' भी इसी कालखण्ड में छपी है। इसमें कुमुद मानसिक उत्पीड़न के प्रसंग को अभिव्यक्त करती है। संस्कृत विषय में एम.ए. करने वाली कुमुद अपने क्षेत्र की प्रथम दलित महिला है। काफी प्रयासों के बाद भी उन्हें नौकरी नहीं मिल पाई। कुछ जगहों पर इंटरव्यू के बाद बाहर निकलते समय उन्हें ये शब्द भी सुनाई देते हैं—'लीजिए अब ये भी संस्कृत पढ़ाएंगी। सरकारी ब्राह्मण जो ठहरे। उनकी कृत्सित हंसी सुई जैसी चुभती।

जाना बाई गिर्हे की 'मरणवेदना' को जनजाति की पहली स्त्री आत्मकथा के रूप में जाना जाता है। समाज सेविका मुक्ता सर्वगोड की 'मिटलेली सवाडे' (बंद दरवाजा), शांताबाई दाणी की 'रात—दिन आमां', उर्मिला पवार की 'आयदान' जैसी आत्मकथाओं के विषय में डॉ. अरुणा लोखंडे लिखती हैं—"दलित स्त्री के आत्मकथन का गठन बिल्कुल अलग है। यह आत्मकथन केवल दुःखों के धागों से बना हुआ है।... दलित स्त्री कभी प्रेमिका नहीं रही। वह केवल मेहनत करने वाली स्त्री है।... भूतकाल से ये महिलाएँ रिश्ते जोड़ती रही हैं और भूतकाल का स्तर जैसे—जैसे खुलता जाता है, वैसे—वैसे व्यथा की व्यथा सामने आती है। इनमें न कोई श्रृंगार पक्ष है, न श्रृंगार कक्ष। दलित स्त्री का दुःख—दर्द किसी अन्य स्त्री का नहीं हो सकता।

हिन्दी के दलित लेखन में नीरा परमार, कुसुम मेघवाल, कावेरी, विमल थोरात, रजत रानी मीनू, सुशीला टांकभोरे, पुष्पा, अनिता भारती, रजनी तिलक, निर्मला पुतुल आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। कौशल्या बैसंत्री का 'दोहरा अभिशाप' हिन्दी में दलित स्त्री का पहला आत्मकथन है। इसमें दलित स्त्रियों का बहुस्तरीय शोषण सामने आया है और इससे दलित स्त्री की संघर्ष क्षमता की भी पुष्टि होती है। दलित स्त्री को स्वाभिमान से जिन्दगी जीने के लिए लेखिका की कही गई इस बात को व्यावहारिक धरातल पर उतारा जा सकता है—'अनुभव से हमने सीख लिया है, यदि हम स्वाभिमान से अपनी उन्नति करना चाहते हैं, तब हमें

अपने पांव पर खड़ा होकर, अपने पर भरोसा रखकर, आगे बढ़ना होगा। हमें अपने अन्दर शक्ति पैदा करनी होगी। किसी का सहारा लेकर चलने से काम नहीं बनेगा। कौशल्या बैसंत्री ने सामाजिक विषयों के साथ—साथ मराठी और अंग्रेजी में भी लिखा है। उन्होंने 'शेडयूल्ड कास्ट फेडरेशन' के महासचिव के रूप में भी कई वर्षों तक काम किया।

सुशीला टांकभोरे की आत्मकथा सन् 2011 में 'शिकंजे के दर्द' नाम से प्रकाशित हुई। इस आत्मकथा में भी दोहरे उत्पीड़न और शोषण की अभिव्यक्ति है। सुशीला टांकभोरे की कहानियाँ दलित समाज में व्याप्त कुरीतियों के खिलाफ लड़ने की प्रेरणा देती हैं। इनके कहानी संग्रह 'संघर्ष' में ग्यारह कहानियाँ संकलित हैं। इन कहानियों के माध्यम से लेखिका दलित उत्थान का रास्ता अम्बेडकरवाद को मानती है। स्त्री स्वाधीनता के प्रति सुशीला टांकभोरे संघर्षशील है। वह समता तो चाहती हैं, लेकिन उनकी रचनाओं में पुरुष के प्रति क्रोध का भाव कम नहीं होता। 'आज की खुद्दार औरत' कविता में वह कहती हैं

'आज यह खुद्दार औरत, अपने आपको पहचान गई है, इसे यूँ न सताओ, वरना यह भी, नंगेपन पर उतर आयेगी, तुम्हारे सर्वस्व को नकारकर, तुम्हें नीचा दिखायेगी।

अगस्त, 1995 में दलित लेखिकाओं ने दिल्ली में राष्ट्रीय स्तर पर 'नेशनल फेडरेशन ऑफ दलित विमेन' नामक संगठन की स्थापना की। विमल थोरात 'दलित लेखक संघ की पहली महिला अध्यक्ष बनी। इस संगठन में लगभग सभी राज्यों की दलित लेखिकाएँ जुड़ती जा रही हैं। इनका मुख्य उद्देश्य कथा, नाटक, नुक्कड़—नाटक कविता आदि माध्यम से भावाभिव्यक्ति के साथ—साथ दलित समाज की समस्याओं को भी लेखन के माध्यम से उजागर करना है।

अपनी रचनाओं के माध्यम से दलित स्त्री अपने जीवन के अनुभव, परम्परागत शोषण और अत्याचार की घटनाओं का उल्लेख करते हुए उनके प्रति अपना

विरोध और आक्रोश व्यक्त कर रही है। दलित लेखिकाओं ने समाज की बुराइयों को भी अपने लेखन में ज्यों का त्यों रखा है। स्त्री मुक्ति की लड़ाई प्रधानता के विरुद्ध नहीं, बल्कि स्त्री-पुरुष समानता के लिए है। पितृसत्ता एक गम्भीर समस्या है। दलित स्त्री चिंतकों का दृष्टिकोण इस संबंध में बिल्कुल स्पष्ट है। उनके अनुसार, जो समुदाय अपनी स्त्रियों को गुलाम बनाकर रखता है, उसे दूसरों से बराबरी का दर्जा मांगने का कोई नैतिक अधिकार नहीं है। इस संदर्भ में उर्मिला पवार बड़े तल्ख स्वर में कहती हैं, 'दलित पुरुष मनुष्यता की लड़ाई लड़ते हैं, लेकिन मनुष्यता है क्या? यह नहीं जानते। अपनी औरतों के प्रति उनका व्यवहार मानवीय नहीं होता।' दलित कथाकारों में उर्मिला पवार ने स्त्री की दुनिया को लेकर बहुत सूक्ष्मता और गहराई से लिखा है। छोटी-छोटी घटनाओं को आधार बनाकर दलित स्त्रियों की स्थिति का चित्रण किया है। इनके 'छठवीं अंगुली' और 'चौथी दीवार' नामक कथा संग्रह बहुचर्चित हैं। 'कवच' कहानी में उर्मिला ने पद दलितों पर हो रहे उपहासात्मक सलूक को बहुत बारीकी से प्रस्तुत किया है।

बामा प्रसिद्ध दलित तमिल लेखिका है। वह जातिवाद को लेकर हुए अन्याय और भेदभाव को अपना विषय बनाती है। दलित स्त्रियों में उच्चपद पर होने के बावजूद चाहे वह राजनीतिक क्षेत्र हों या उनका शैक्षिक या कोई अन्य क्षेत्र हों, लेकिन जाति के कारण वे सामाजिक हिंसा का शिकार होती हैं। दलित लेखिका बामा का कहना है, मैं पढ़ी-लिखी स्त्री हूँ नौकरी करती हूँ, पर मेरी पहचान अभी भी एक दलित स्त्री की ही है।⁸

इस तरह दलित लेखिकाओं की रचनाओं में सबसे महत्वपूर्ण पहलू है, पुरुष सत्तात्मक समाज में स्त्री का निरंतर शोषण, उसके अस्तित्व और अस्मिता का कुचला जाना और इनके विरोध में स्त्री का संघर्ष, दलित स्त्री मध्यवर्गीय हो अथवा निम्नवर्गीय, मजदूर हो अथवा सामाजिक कार्यकर्ता या किसी भी पद पर आसीन हो, उसे दलित और स्त्री होने की पीड़ा

साथ-साथ झेलनी पड़ती है। यह तथ्य लगभग सभी लेखिकाओं के लेखन में समान रूप से आया है।

अन्याय, गुलामी, दरिद्रता और प्रवंचना ने स्त्री के जीवन को एक सी भयावहता, दीनता और लाचारी की पीड़ा से भर दिया है। अतः कहा जा सकता है कि दलित स्त्रियों के चिंतन और संघर्ष का रास्ता अत्यंत कठिन है, फिर भी वह अपने अधिकारों के लिए लड़ रही है और लड़ती रहेगी। अंत में मैं निर्मला पुतुल के इस कवितांश को उद्धृत करना चाहूँगी

'मैं चाहती हूँ, आँख रहते अंधे आदमी की, आँखें बने मेरे शब्द, उनकी जुबान बने, जो जुबान रहते, गूंगे बने, देख रहे हैं तमाशा, चाहती हूँ मैं, नगाड़े की तरह बजे मेरे शब्द।'

- डॉ. ललिता कौशल

ट्रीनिटी हॉउस कैलस्टन इस्टेट, शिमला-1

संदर्भ:-

1. मंजू मौर्य (सं.), सम्यक भारत, दिल्ली, अंक-4, फरवरी, 2015, पृ. 63
2. तेज सिंह (सं.), अपेक्षा, दिल्ली, अंक-4, जुलाई-सितंबर, 2003, पृ. 54
3. कुमुद पावड़े, अंतःस्फोट, सुगावा, पुणे, महाराष्ट्र, पृ. 12
4. डॉ. अरुणा लोखंडे, समकालीन भारतीय साहित्य, दलित महिलाओं का आत्मकथन, पृ. 11
5. कौशलया बैसंत्री, दोहरा अभिशाप, परमेश्वरी, नई दिल्ली, भूमिका
6. मोहनदान नैमिशराय (सं.), बयान, दिल्ली, अंक-91, मार्च, 2014, पृ. 28
7. तपन बसु (सं.), ट्रांसलेटिंग कास्ट, उर्मिला पवार से इंटरव्यू, पृ. 237
8. कृष्ण किशोर (सं.), अन्यथा, लुधियाना, अंक-12, पृ. 23
9. रमणिका गुप्ता, दलित चेतना साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकार, समीक्षा, दिल्ली, पृ. 85

आतंकवाद से भी खतरनाक जातिवाद है, जातिवाद को जड़ से समाप्त किया जाना चाहिए

- डॉ. बी.एल. परमार

विश्व में भारत ही एकमात्र ऐसा देश है, जहां जातियों का बोलबाला है। यहां 6500 से अधिक जातियां हैं। डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि भारत जातियों का समूह है। यहां जातियां आपस में ही लड़ती-भिड़ती रहती है। छोटी जातियों के साथ सदियों से ऊंच-नीच, छुआ-छूत, घृणा, प्रताड़ना, हिंसा, अन्याय, अत्याचार, अपमान आदि होता आया है। उच्च जाति के व्यक्ति निम्न जाति के व्यक्ति को हेय दृष्टि से देखते हैं। हमारे धर्म शास्त्रों में भी बहुजन पात्रों से हीनता भरी भाषा का प्रयोग करवाया है। उन्हें आदर, सम्मान नहीं दिया है। यहाँ व्यक्ति को योग्यता से नहीं जाति से मान-सम्मान मिलता है। यदि गहराई से अध्ययन करें तो जाति व्यापार-व्यवसाय तक प्रवेश कर चुकी है। एक जाति का व्यापारी अपनी जाति के व्यापारी को विशेष प्रोत्साहन, मदद व संरक्षण देता है। जिस जाति का डॉक्टर होगा उस जाति के मरीज उसके पास अधिक जाते हैं। जिस दवाई में अधिक लाभ होता है, डॉक्टर उसी दवाई को अधिक लिखकर व्यापारी को लाभ पहुंचाते हैं। वरिष्ठ पदों पर बैठे अधिकारी अपनी जाति के अपराधी को संरक्षण प्रदान करते हैं। यदि अपराधी अधिकारी की जाति का है तो उन पर कार्यवाही नहीं करते या कमजोर धाराओं का प्रयोग करते हैं। उच्च जाति के अधिकारी द्वारा बहुजन समाज की रिपोर्ट तक नहीं लिखी जाती है। उल्टा फरियादी को प्रताड़ित कर भगा दिया जाता है। अपराधी को छुड़ाने के लिए कई जाति संगठन के नेता

झापन प्रदर्शन व नारेबाजी कर मुक्त कराने के लिए दबाव बनाते हैं। या प्रकरण को झूठा साबित करने का प्रयास करते हैं। अधिकारी भी निरपेक्ष नहीं रहते वह भी जाति नेताओं के प्रभाव में आकर उनकी इच्छा अनुसार कार्य कर देते हैं। हजारों वाद जातिवाद के कारण चल रहे हैं या फाइलों में बंद पड़े हैं। गांवों में जातिवाद का जहर अधिक घुला हुआ है।

हमारी चुनाव प्रणाली भी दूषित है। राजनीति में जातिवाद का पूर्ण प्रभाव है। जिस जाति का जहां बाहुल्य है, वहां से उसी जाति का उम्मीदवार जीताकर सदन में पहुंचा रहे हैं, चाहे वह अपराधी हो। जाति के आधार पर चुनाव हुआ व्यक्ति अपनी जाति की सोच से बाहर नहीं निकल पाता है। उसके सामने केवल अपनी जाति ही दिखाई देती है। क्योंकि वह योग्यता या कर्मठता से नहीं जाति के बल पर जीत कर आया है। जनप्रतिनिधि अपनी जाति का संरक्षण करते हैं। चुनाव में जाति हिंसा भी होती है। संकीर्ण जातिवाद राष्ट्र को कमजोर कर रहा है। कार्यालयों में जातीय ग्रुप बन जाते हैं। सक्षम को न्याय मिलता है, किंतु कमजोर को न्याय नहीं मिलता है। जाति दबाव के कारण बड़े-बड़े अधिकारी पंगु बन जाते हैं। या जाति संरक्षण पाकर कई वर्षों तक जमे रहते हैं। कुछ जातीय गैंग नाना प्रकार के अपराध करती है। अब जातिगत सामाजिक संगठन भी बन गए हैं। ये सरकार पर दबाव बना कर कार्य करवाते हैं।

इस देश में जातिवाद इतना घटिया स्तर का है

कि एक जाति दूसरी जाति को फलता-फूलता नहीं देखना चाहती है। स्वतंत्रता के बाद आरक्षण प्राप्त कर मूलनिवासी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक दृष्टि से कुछ ऊपर उठे हैं। किंतु सवर्ण कहलाने वाले इनकी यह प्रगति पचा नहीं पा रहे हैं। संविधान और आरक्षण समाप्त करने के लिए नित नए आंदोलन चला रहे हैं। मानव मसीहा, 32 डिग्री के स्वामी, भारत रत्न बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर की प्रतिमा जातिगत हीन भावना से खंडित कर रहे हैं। सवर्ण इस प्रजातंत्र में भी दलित, पिछड़ों को दास, सेवक, गुलाम, दिन-हीन गरीब रखना चाहते हैं। उनके दूल्हे को घोड़ी पर नहीं बैठने देते, मंदिर में प्रवेश नहीं करने देते, कई जगह उनके शव को श्मशान में नहीं जलाने देते, उनके साथ तुच्छ हरकत व शोषण करते हैं। कुए-नल से पानी नहीं भरने देते, उनकी बस्ती या झोपड़ी में आग लगा देते हैं। उनकी महिलाएं सुरक्षित नहीं है। आरक्षित वर्ग के राजनेता व अधिकारी दबकर कार्य करते हैं। यह सब इस देश में जातिवाद के कारण होता है।

कबीर, संत रविदास, गरुनानक, छत्रपति शाहूजी महाराज, महात्मा ज्योतिबा फुले, माता सावित्रीबाई फुले, रामास्वामी पेरियार, विश्व विद्वान डॉ. अम्बेडकर आदि महान विभूतियों ने जातिवाद का घोर विरोध वर्षों पूर्व किया है। किंतु फिर भी कुछ कट्टरपंथी जातिवाद को बढ़ावा देने में लगे हुए हैं। बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर द्वारा निर्मित भारतीय संविधान विश्व का सर्वश्रेष्ठ संविधान है। जिसमें सभी जाति धर्म वर्ण के स्त्री-पुरुषों को समान रूप से प्रगति करने व रहने का अवसर प्रदान किया है। किंतु संकीर्ण मानसिकता वाले नहीं चाहते की दलित

पिछड़े भी देश की मुख्य धारा में सम्मिलित हो कर राष्ट्र निर्माण में सहभागी बने। मनुवादियों की घृणित कट्टर जातीयता के कारण देश हजार वर्ष तक गुलाम रहा और अखंड भारत खंडित हो गया। किंतु फिर भी इनकी चेतना जागृत नहीं हुई। आधुनिक युवक-युवती यदि अपनी इच्छा से अंतर्जातीय विवाह कर ले तो कट्टर जातिवादी उसे स्वीकृति नहीं देते हैं। जाति पंचायत कर उन्हें प्रताड़ित, दंडित करते हैं। यहां तक की उन्हें मौत के घाट उतार देते हैं।

जब तक भारत में जातिवाद का कोढ़ रहेगा भारत एक स्वस्थ, सुखी, सक्षम, संगठित, संपन्न राष्ट्र नहीं बन सकता। संविधान निर्माता बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर ने जाति विहीन समाज की कल्पना की थी। किंतु यहां तो जाति समाप्त करने के बजाय सत्तालोलुपों द्वारा जाति जनगणना करवा कर मानव को खंड-खंड करने पर तुले हुए है। जाति कई समस्याओं की जननी है। देश की प्रगती में बांधक है। कोएजुकेशन, समान शिक्षा, अंतर्जातीय विवाह, समता, स्वतंत्रता, बंधुत्व को अपनाकर देश को जातिवाद से मुक्त कराना चाहिए। तभी भारत एक मजबूत संपन्न राष्ट्र बनेगा। जातिवाद भारत की सदियों पुरानी गंभीर बीमारी है। अब समय आ गया है कि इस बीमारी को जड़ से समाप्त किया जाये। आतंकवाद से भी खतरनाक जातिवाद है। आतंकवाद तो किसी एक क्षेत्र को प्रभावित करता है। किंतु जातिवाद तो पूरे देश की जड़े खोखली कर रहा है। प्रजातंत्र के लिए जातिवाद खतरा है।

13, भार्गव कॉलोनी नागदा जं.
जिला उज्जैन (म. प्र.) 456335
मोबा. : 8770607747

बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर की दृष्टि अत्यंत विशाल थी, उनकी दृष्टि मानवतावादी थी। उन्होंने जातियता की विघटनकारी प्रवृत्ति पर गौर करके उससे उत्पन्न समस्याओं का विश्लेषण किया। वे कहते हैं "हम जाति की कमजोर नींव पर मानव जाति के विकास की इमारत खड़ी नहीं कर सकते हैं और न ही राष्ट्र का निर्माण। नैतिक मूल्यों की सुरक्षा भी नहीं कर सकते। यानी जातियता की नींव पर जो विकास की इमारत खड़ी होगी वह शाश्वत नहीं होगी उसमें एकता का अभाव होगा जो कभी भी गिर सकती है, लेकिन भारतीय समाज ने उनकी मानवतावादी दृष्टि को नहीं अपनाया।

समस्त भारतीय समाज को मानवता का पाठ पढ़ाने वाले विश्व मानव महामना डॉ. अम्बेडकर अद्वितीय हैं। उन्हें जानने, समझने के लिये हमारे पास मानवतावादी दृष्टि होना जरूरी है।

दलितों की सामाजिक प्रतिष्ठा का पहला चरण है, उनकी सामाजिक स्वीकृति। जब तक समाज में विभेदीकरण है- वर्ण, वर्ग और जातियाँ हैं तब तक दलितों को असमानता, अन्याय, अमानवीयता पूर्ण व्यवहार से उबरने हेतु अपना संघर्ष जारी रखना पड़ेगा। सामाजिक न्याय की स्थापना के लिये केवल कोरी सैद्धांतिक बातें करना बन्द करना पड़ेगी।

बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर का प्रयास दलितों के साथ-साथ संपूर्ण भारतीय समाज को एक प्रगतिशील, न्यायपूर्ण और सम्मुनत समाज बनाने का था। उनके प्रयास के महत्व को देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू के इन शब्दों से भली-भांति समझा जा सकता है, जो उन्होंने डॉ. अम्बेडकर के महापरिनिर्वाण पर अपने शोक संदेश के रूप में कहे थे- "डॉ. अम्बेडकर सामाजिक विसंगतियों के विरुद्ध संघर्ष के प्रतीक थे। उन्होंने उन सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध संघर्ष किया जिनके विरुद्ध हम सबको संघर्ष करना चाहिए।"



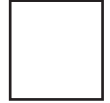
गुरु घासीदास जयंती 18 दिसम्बर 2021 की हार्दिक शुभकामनाएं

पंजीयन संख्या

RNI No. MPHIN/2002/9510

डाक पंजीकृत क्रमांक मालवा डिवीजन/204/2021-2023 उज्जैन (म.प्र.)

प्रतिष्ठा में,



पत्र व्यवहार का पता :
20, बागपुरा, सांवेर रोड,
उज्जैन 456 010 (म.प्र.)

प्रकाशक, मुद्रक पिंकी सत्यप्रेमी ने भारती दलित साहित्य अकादमी की ओर से
मालवा ग्राफिक्स, 29, वररुचि मार्ग, गुरुद्वारे के सामने, फ्रीगंज, उज्जैन फोन : 0734-4000030 से मुद्रित एवं
20, बागपुरा, सांवेर रोड, उज्जैन 456 010 (म.प्र.) फोन : 0734-2518379 से प्रकाशित।

सम्पादक : डॉ. तारा परमार